www.thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 13 अक्तूबर 2013 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 13 अक्तूबर, 2013 से 19 अक्तूबर 2013

आश्विन. शु.–09 ● वि० सं०–2070 ● वर्ष 79, अंक 76, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 190 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,114 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी इंटरनैशनल अमृतसर में 'ऑन लाइन लेखा-जोखा प्रबन्धन' पर हुई कार्यशाला

डी.ए.वी. इंटरनैशल स्कूल, अमृतसर में डी.ए.वी. प्रबन्धकर्त्री समिति नई दिल्ली की ओर से श्री जे.पी. शूर, निर्देशक पब्लिक स्कूल–I व सहायता प्राप्त स्कूल की अध्यक्षता में 'ऑन लाइन लेखा–जोखा प्रबन्धन' विषय पर कार्यशाला का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर विद्यालय के चेयरमैन डा. वी.पी. लखनपाल, क्षेत्रीय प्रबन्धिका डॉ. (श्रीमती) नीलम कामरा, प्रबन्धक, प्रि. के.एन. कौल, डा. (श्रीमती) पी.पी. शर्मा, प्रि. श्रीमती अजय सरीन के साथ–साथ ऑन लाइन लेखा–जोखा प्रबन्धन के तकनीकी सलाहकार श्री रविंदर वर्मा, श्री कुलदीप भारद्वाज और विषय में [illegible]क्षता प्राप्त श्रीमती रितु विशेष रूप से उपस्थित थे। सत्र का शुभारंभ दीप प्रज्ज्वलन से हुआ। विद्यार्थियों ने वैदिक मंत्रों के गायन के साथ अतिथिगणों का अभिनंदन किया।

डी.ए.वी. विद्यालयों के प्रिंसीपलों और लेखाकारों को सम्बोधित करते हुए श्री जे.पी. शूर जी ने कहा कि आज के तकनीकी युग में प्रत्येक कार्य कम्प्यूटर और इंटरनेट के माध्यम से हो रहा है। देश भर में फैली सभी डी.ए.वी. संस्थाओं का लेखा–जोखा अब ऑन लाइन होगा। ऑन लाईन लेखा–जोखा प्रक्रिया से समय की बचत भी होगी और कार्य की कुशलता भी बढ़ेगी। यह प्रक्रिया सभी के लिए अत्यंत लाभकारी रहेगी।

श्रीमती रितु ने ऑन लाइन लेखा–जोखा प्रक्रिया के बारे में विस्तृत जानकारी दी।

तकनीकी सलाहकार श्री रविन्दर वर्मा और कुलदीप भारद्वाज ने उपस्थित जनों को इस प्रक्रिया के विषय में विस्तृत जानकारी दी।

प्रिंसीपल अंजना गुप्ता ने सभी अतिथिगणों और तकनीकी सलाहकारों का आभार व्यक्त किया।

डी.ए.वी. तिगाँव में हुए वैदिक प्रवचन

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, तिगाँव में शिक्षक दिवस के उपलक्ष्य पर वैदिक विद्वानों के उपदेश हुए। कार्यक्रम का प्रारम्भ भव्य शोभायात्रा के द्वारा किया गया। शोभायात्रा में स्वामी दयानन्द, आर्यसमाज, हंसराज जी के नारों से पूरा नगर गुंजायमान हो रहा था। विद्यालय के छात्रों व प्राचार्या जी द्वारा विद्वानों का सम्मान किया गया। इस अवसर पर पं. नरेश दत्त आर्य 'विदेशी', पं. राजेश शास्त्री, अमित दत्त, सुमित्र आर्य, अजय आर्य आदि विद्वान उपस्थित थे।

इस अवसर पर शिक्षक कौन है उसके मुख्य क्या कर्तव्य हैं एवं छात्रों को कैसी शिक्षा दी जानी चाहिए इन सब बातों पर वेदरथी जी ने प्रकाश डाला। विद्यालय की प्राचार्या श्री मती अलका अरोड़ा जी ने अभ्यागत विद्वानों अभिभावकों का धन्यवाद करते हुए शिक्षक दिवस की सभी को बधाई दी। विद्यालय के मैनेजर श्रीमान सतीश आहुजा जी एवं चेयरमैन श्रीमान टी. पी. गुप्ता जी ने भी सभी को कार्यक्रम की सफलता व शिक्षक दिवस की शुभकामनाएँ दी।

कार्यक्रम की समाप्ति शान्तिपाठ के साथ की गयी। कार्यक्रम के संयोजक जितेन्द्र दत्त शास्त्री थे।

डी.ए.वी कोटा में हुआ वेद प्रचार सप्ताह का शुभारंभ

वेद पढ़कर ही राम और कृष्ण भगवान बने यह बात विधायिक चन्द्रकांता ने महर्षि वेद प्रचार सप्ताह कार्यक्रम के शुभारंभ के अवसर पर डी.ए.वी पब्लिक स्कूल कोटा में आयोजित भव्य समारोह में कही।

उन्होंने कहा भारत की संस्कृति विश्व में सबसे अलग है। इसका कारण वेद ज्ञान है। बालकों को वेद से जोड़ने का यह कार्य प्रत्येक विद्यालय में होना चाहिए।

जिला आर्य प्रतिनिधि सभा प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा ने कहा कि आर्य समाज एक वैचारिक आंदोलन है समाज में चल रही कुरीतियों व अंधविश्वासों को मिटाकर वेदों पर आधारित एक वैचारिक क्रांति लाना तथा मानव मात्र की शारीरिक, सामाजिक व आत्मिक उन्नति करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है।

डी.ए.वी. धर्म शिक्षक शोभाराम आर्य ने कहा कि वेद हमें सच्चा मनुष्य बनने की प्रेरणा देता है। विद्यार्थियों को वेद के अनुरूप जीवन जीना चाहिए।

इस अवसर पर प्राचार्या श्रीमती सरिता रंजन तथा विधायिका चन्द्रकांता मेघवाला का सम्मान किया गया।

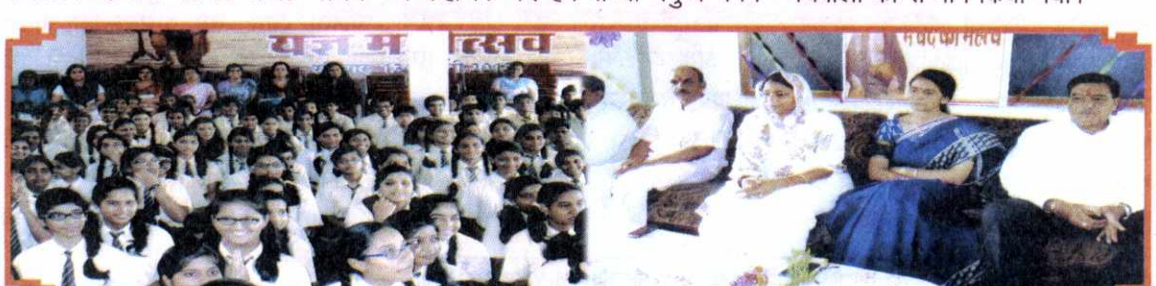

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

www.thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 13 अक्टूबर, 2013 से 19 अक्टूबर, 2013

दोनों हाथों से भर-भरकर दें

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

दिवो विष्ण उत वा पृथिव्याः, महो विष्ण उरोरन्तरिक्षात्।
हस्तौ पृणस्व बहुभिर्वसव्यैः, आप्रयच्छ दाक्षिणादोत सव्यात्।।

अथर्व 7.26.8

ऋषिः **मेधातिथिः**। देवता **विष्णुः**। छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● (**विष्णो**) हे सर्वव्यापक परमात्मन्! (**दिव**) द्युलोक से (**उत वा**) और (**पृथिव्याः**) पृथिवी–लोक से [तथा] (**विष्णो**) हे विश्वान्तर्यामिन्! यज्ञ के देव! (**महः**) महनीय (**उरोः**) विस्तीर्ण (**अन्तरिक्षात्**) अन्तरिक्ष–लोक से (**बहुभिः**)वहुत– से (**वसव्यैः**) ऐश्वर्य–समूहों से (**हस्तौ**) दोनों को (**पृणस्व**) भर ले। (**दक्षिणात्**) दाहिने हाथ से (**आ प्रयच्छ**) दान दे (**उत**) और (**सव्यात्**) बाएँ से [भी] (आ [प्रयच्छ]) दान दे।

● हे विष्णु! हे सर्वव्यापक! हे विश्वान्तर्यामिन्! हे विश्व–ब्रह्माण्ड के स्वामिन! तुम अपूर्व धनाधीश हो। विश्व के द्युलोक, अन्तरिक्ष–लोक और पृथिवी–लोक में जो धन बिखरा पड़ा है, वह सब तुम्हारा ही है। अतः तुम धन–कुबेर हो। एक और तुम धनपति हो ओर हम अकिंचन है। अतः हम चाहते हैं कि तुम अपने कोष में से दाहिने–बाएँ दोनों हाथों से भर–भरकर हमें दान दो। तुम्हारे रचे द्यु–लोक में प्रकाश का अनुपम पारावार भरा पड़ा है। वह प्रकाश तुम हमें भी प्रदान करो। तुम्हारे रचे विशाल अन्तरिक्ष–लोक में वायु और पर्जन्य का सागर उमड़ रहा है। उसमें से हमें भी प्राण–वायु और अमृतमय वृष्टि–जल प्रदान करो। तुम्हारे रचे पृथ्वी–लोक से सुवण, रजत, ताम्र अयस, हीरे, मोती आदि ऐश्वर्यों की निधियाँ भरी हुई हैं। वे ऐश्वर्य तुम हमें भी प्रदान करो। अल्प मात्रा में नहीं, प्रचुर मात्रा में प्रदान करो, क्योंकि हम ऐश्वर्यमय जीवन जीने की ही साध लिये हुए हैं।

पर हे विश्वव्यापी देव! हम केवल इन भौतिक ऐश्वर्यों का ही पाकर सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहते। हम शरीरस्थ द्यु–लोक, अन्तरिक्ष–लोक और पृथिवी–लोक के ऐश्वर्यों को भी पाने के लिए आतुर हो रहे हैं। हमारा अन्नमय कोश ही पृथिवी–लोक है, जिसमें शरीर की त्वचा से लेकर अस्थि–पर्यन्त सब ढ़ांचा आ जाती है। असका ऐश्वर्य है शारीरिक स्वास्थ्य और शारीरिक बल, जिसके बिना मनुष्य का जीवन–यापन,व्यान,उदान, समा, इन पांचों से तथा कर्मेन्द्रियों से मिलकर प्राणमय कोश बनता है। इसका ऐश्वर्य है प्रागण, अपानन आदि क्रियाओं का समुचित रूप से होते रहना तथा हस्त–पादादि कर्मेन्द्रियों को कार्य–क्षम बने रहना। मन और ज्ञानेन्द्रियों से मिलकर मनोमय कोश बनता है। इसका ऐश्वर्य है मन के माध्यम से ज्ञानेन्द्रियों का ज्ञान–प्राप्ति में सहायता होना तथा मन का सत्यसंकल्प करना। ज्ञानेन्द्रियों–सहित बुद्धि विज्ञानमयकोश कहलाता है। इसका ऐश्वर्य है ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त ज्ञान पर ऊहापोह करके निश्चयात्मक ज्ञान अर्जित करना। आनन्दमय कोश द्यु–लोक है, जहाँ हृदयपुरी में प्रतिष्ठित आत्मा के अन्दर ब्रह्म का वास है। इसका ऐश्वर्य है ब्रह्मानन्द की प्राप्ति। हे विष्णुदेव! तुम इन समस्त ऐश्वर्यों से भी भरपूर करने की कृपा करते रहो।

हे जगत्पिता! तुम निरैश्वर्य की अवस्था से पार करके हमें अधिकाधिक ऐश्वर्य प्रदान कर कृतार्थ करते रहो।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

तत्त्व-ज्ञान

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में हमने पढ़ा कि 'तत्त्वज्ञान' रूपी विषय की गंभीरता और विशालता की ओर संकेत करते हुए स्वामी जी ने इस विषय पर कुछ कहने का औचित्य बताया। इस संसार के विषय में कुछ मूलभूत प्रश्न उठाये – ईश्वर ने यह संसार क्यों बनाया? किसकी प्रार्थना पर बनाया? इसमें इतने कष्ट, इतना रुदन, इतनी पीड़ा, इतना वैमनस्य क्यों है? संसार में फैली विषमताओं का संकेत कर प्रश्न उठाया कि यदि यही सृष्टि है तो प्रलय किसे कहें?

विश्वभर के दार्शनिकों, चिंतकों ने जिस नये आकाश का स्वप्न संजोया, जो नये आदर्श और लक्ष्य निर्धारित किए सब असफल हो गए, परिणाम केवल हाहाकार निकला। स्वामी जी ने बताया कि इस दयनीय अवस्था से, इस भंवरों और मझधारों से निकलने का एकमात्र उपाय हैं "तत्त्वज्ञान"।

इस ज्ञान को प्राप्त करने हेतु मन के अत्यन्त निग्रह की आवश्यकता की बात कही और इस ज्ञान का अधिकारी बनने के लिए अभीष्ट तैय्यारी जिकर किया जिसमें आत्म–अनात्म, तत्त्व, विवेक, वैराग्य, मुमुक्षत्त्व तथा अनन्य भक्ति का संकेत दिया।

आज दुनिया की सबसे बड़ी आवश्यकता क्या है यह बताकर इस पुस्तक को लिखने में आई कठिनाई का वर्णन किया। 'तत्त्वज्ञान' रुपी इस अमृत से सारे संसार को तृप्त करना आर्य का कर्तव्य है। भारत–भूमि पर जन्म लेना हमारा सौभाग्य है, इसका लाभ उठाकर 'तत्त्वज्ञान' रुपी अटल सत्य का साक्षात्कार करने की प्रेरणा देते हुए पुस्तक की प्रस्तावना प्रस्तुत की–

अब आगे–

हृदय की पुकार

वासनाक्षय और मन

दीपक जल रहा है। यदि वायु का झोंका इसे बुझा न दे, तो यह जलता रहेगा। हाँ, तब तक जलता रहेगा, जब तक इसका तेल तथा बत्ती समाप्त नहीं हो जाती। जब तेल–बत्ती दोनों का अभाव हो जायेगा, तो दीपक का भी अभाव हो जायेगा। परन्तु यह न समझिये कि इनका नाश हो गया है; अपितु यह समझिये कि इनका रूपान्तर हो गया है।

यदि साधक अपने चित्त में कोई नई वासना न आने दे, तो चित्त की वासनाओं का दीपक समय आने पर स्वयमेव शान्त हो जायेगा, जन्म–जन्मान्तरों की एकत्रित वासनाओं का तेल जलते–जलते एक दिन तो समाप्त हो ही जाना है। हाँ, वासनाओं का नया तेल इस दीपक में साधक को नहीं डालना चाहिये। नया तेल पड़े नहीं, पुराना तेल जलता जाय, तब वासना का दीपक अवश्य शान्त हो जायेगा। इसी की वासनाक्षय कहते हैं।

इसी अवस्था के सम्बन्ध में यम ने नचिकेता को कहा था कि:

यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येऽस्य हृदि श्रिताः।
अर्थ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समुश्नुते।। कठ. 6.14.

'जब सारी कामनाएँ, जो इसके हृदय में है, छूट जाती है तो मनुष्य अमृत हो जाता है– इस अवस्था में ब्रह्म को प्राप्त होता है।'

परन्तु वासना तब तक पीछा नहीं छोड़ती है, जब तक मन अपना संसार निर्माण करता रहता है। और मनुष्य है मननशील; यह मन सोते–जागते, उठते–बैठते, हर समय नई–से–नई दुनिया बनाता रहता है। तब वासना का क्षय कैसे हो सकेगा? और मन का तो ऐसा कपि–स्वभाव है कि यह एक क्षण के लिए भी निश्चल नहीं होता। सत्य तो यह है कि मनुष्य इस मन का बँधा ही बार–बार जन्म मृत्यु के चक्र में भ्रमण करता और ऐसे कष्ट सहन करता है कि जिसके विचार से भी शरीर कम्पित हो उठता है। फिर यह मन ही एक ऐसा साधन है जिससे संसार के सारे कार्य सिद्ध भी होते हैं और बिगड़ते भी हैं। वेद भगवान् ने तो कहा भी है:

'यस्मान्न ऋते किं चन कर्म क्रियते।' यजु. 34.3.

'जिसके बिना कोई कर्म नहीं किया जाता।'

फिर वेद ने यह भी आदेश दे दिया कि:

'कथं न रमते मनः।' अथर्व. 10.7.37

'मन तो कभी दम लेता नहीं।'

www.thearyasamaj.org

जिस मन के सम्बन्ध में वेद ने यह भी घोषणा कर रखी है:

स्थिरं मनश्चकृषे जात इन्द्र वेषीदेको युधये भूयसश्चित्।।

ऋ. 5.30.4.

'भगवान् इन्द्र की इच्छा करने वाले! यदि तू समर्थ होकर मन को स्थिर करे, तो तू अकेला ही बहुतों (अनेक विघ्न–बाधाओं तथा विषमों) को भी युद्ध में जीत सकता है।

मन से मन का दमन

परन्तु इसका स्थिर होना ही तो एक बहुत बड़ी समस्या है।

पुनः मन में जो संकल्प–विकल्प तरंगवत् उठते रहते हैं, उनका अन्त ही नहीं होता। उसके द्वारा जीव कितनी विपत्तियों में फँसा रहता है, इसका तो अनुमान लगाना भी कठिन है। योगवासिष्ठ के उत्पत्ति प्रकरण, सर्ग 111 में कहा गया है:

भीमा संभ्रमदायिन्यः सङ्कल्पकारणादिमाः।
विपदः संप्रसूयन्ते मृगतृष्णाः मराविव।। 36।।

'संकल्परूपी क्लेश से भयंकर अनेक संभ्रण को देने वाली विपत्तियाँ इस प्रकार उत्पन्न होती है जैसे मरुस्थल में मृगतृष्णा की नदियाँ।'

भगवान् राम ने कितनी आतुरता से ऋषि से यह कहा था:

कथमस्यातिलोलस्य वेगो नैकारणम्।
चलतो मनसो ब्रह्मन्बलो विनिवार्यते।।

उत्पत्ति प्रकरण, सर्ग 112.2.

'हे भगवन्! अतिचंचल जो यह मन है, उसका वेग सम्पूर्ण तीव्र वेगों का मुख्य कारण है। वह बल से भी कैसे निवारण किया जाये?'

तब गुरु वशिष्ठ जी ने कहा था :

नेह चंचलताहीनं मनः क्वचन दृश्यते।
चंचलत्वं मनो धर्मो वह्नेधर्मो यथोष्णता।।

'हे राम जी! इस ब्रह्माण्ड में चंचलता से शून्य मन तो कहीं भी नहीं देख पड़ता। चंचलता मन का ऐसा धर्म है जैसे अग्नि का धर्म उष्णत्व है।'

यहाँ तक ही नहीं, योगवासिष्ठ ने तो यह भी कह डाला कि:

अप्यब्धिपानान्महतः सुमेरुन्मूलनादपि।
अपि वह्न्यशनात् साधो विषमश्चित्तनिग्रहः।।

'समुद्र को पी डालने से, सुमेरु पर्वत को उखाड़ डालने से या फिर दहकते हुए अंगारों को सटक लेने से भी हे साधो! इस चित्त का निग्रह कर लेना कहीं कठिन है।'

योगवासिष्ठ की यह बात सुनकर कहीं निराश ही न हो जाना। इसने भी मनोनिग्रह महाकठिन तो कहा है, परन्तु असम्भव होता तो वेद यह भी न कहता कि :

'युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्राः।' ऋ. 5.81.1.

'बुद्धिमान् योगीजन मन को युक्त, समाहित करते हैं और धारणाओं एवं वृत्तियों को युक्त, समाहित करते हैं।' अतएव उदास, निराश, हताश होने की आवश्यकता नहीं। हाँ, सावधान होने की अवश्य जरूरत है। यदि मनुष्य–जन्म पाकर भी हम सावधान न हुए तो फिर निस्सन्देह यह नाना योनियों में घुमाता फिरेगा।

'अतः सर्वस्व जीवस्य बन्धुकृन्मानसं जगत्। पंचदशी।।

'यही निश्चय करना पड़ता है कि जीव का मानस–जगत् ही सबको बन्धन में डालता है।'

शुकदेव ने जब जनक जी से यह पूछा कि यह संसाररूपी आडम्बर कैसे उत्पन्न हुआ? तो जीवन्मुक्त जनक जी ने यही उत्तर दिया कि 'मन के विकल्प' से यह संसार उत्पन्न होता है और विकल्प के क्षय होने पर यह नष्ट हो जाया करता है।' –अज्ञानोपहित अन्तःकरण में नाना प्रकार के संसार की कल्पना का विकल्प है।

श्रीमद्भागवत में भी कहा है :

मनः सृजति वैदेहान्गुणान्कर्माणि चात्मनः।
तन्मनः सृजते माया ततो जीवस्य संसृतिः।। 12.5.6.

'एकमात्र मन (अर्थात् आत्मा के पास मन ही वह हथियार है, जिसके द्वारा जीवात्मा काम करता है) की इस आत्मा के लिए देह, गुण तथा कर्मादि की रचना करता है और उस मन को माया रचती है। उस मायारूपी उपाधि के कारण ही जीव को जन्म–मरण रूपी संसार प्राप्त होता है।'

इसी भागवत के 11वें स्कन्ध में यह कहा है :

नायं जनो में सुखदुःखहेतुर्न देवतात्माग्रहकर्मकालाः।
मनः परं कारणमामनन्ति संसारचक्रं परिवर्तयेद्यत्।।

भाग. 22.43.

'मेरे सुख–दुःख का कारण ये लोग नहीं हैं; देवता और आत्मा भी नहीं हैं; ग्रह, कर्म, काल भी नहीं हैं; जो संसार–चक्र को चलाता है, उस मन को ही सुख–दुःख कारण कहते हैं।' यह मन ही सबको संसार में लिये फिरने का साधन है। यदि मन को संकल्प–विकल्प–रहित कर दिया जाय, तब संसार की वासनाएँ कहाँ टिकेंगी? मन का दमन करने की युक्ति गुरु वसिष्ठ ने यह बतलाई है :

'मन एवं समर्थ वो मनसो दृढनिग्रहे।'

'हे राम जी! तुम्हारा मन ही मन को दमन करने में समर्थ है।' यहाँ मन का प्रयोजन केवल मन ही नहीं, अपितु बुद्धि तथा चित्त से मिला हुआ मन अभिप्रेत है। मन बेचारा अकेला तो कुछ भी नहीं। इसका काम तो केवल ग्रहण करना और छोड़ना है। जब मन किसी इन्द्रिय द्वारा किसी वस्तु या विषय को ग्रहण करता है, तो उसे तत्काल बुद्धि के पास पहुँचा देता है। वह वस्तु अच्छी है या बुरी, सेवन करने योग्य है या अयोग्य, धर्म–मर्यादानुसार है या विपरीत, उचित है अथवा अनुचित, इसका निश्चय यह मन नहीं करता, बुद्धि करती है। यदि बुद्धि का निश्चय यह है कि यह वस्तु ठीक है, तब चित्त उसे धारण कर लेता है और तब संसार बनने लगता है। अब राग की उत्पत्ति हो गई; उस वस्तु में एक प्रकार की ममता आने लगी। उसे प्राप्त करने के लिए अनेक योजनाएँ बुद्धि ने बनानी आरम्भ कर दीं। यदि उसका मिलना कठिन प्रतीत हुआ, तब क्रोध की ज्वाला भड़की। क्रोध की अग्नि प्रज्वलित होते ही बुद्धि के अत्यन्त सूक्ष्म तन्तु गर्म होने लगते हैं। यह फिर अपना कार्य भली–भाँति नहीं कर सकती। यदि तमोगुण प्रधान है, तो क्रोध बुद्धि का सर्वथा नाश कर देता है और मनुष्य से ऐसा घृणित कर्म करा देता है कि तत्पश्चात् उसे स्वयं लज्जा आने लगती है। यदि रजोगुण–प्रधान है तो हानि तो बहुत पहुँचाता है, परन्तु मात्रा अधिक नहीं बढ़ती। यदि सत्त्वगुण–प्रधान हो, तो पहले तो क्रोध आता ही नहीं, यदि आ भी जाय, तो बिना हानि पहुँचाये ही शान्त हो जाता है। परन्तु अपनी रेखा चित्त पर छोड़ जाता है।

अब आप देखिये कि मन ने तो केवल किसी एक इन्द्रिय द्वारा किसी वस्तु का ग्रहण–मात्र किया और यहाँ संसार बनना आरम्भ हो गया। वासनाएँ इसी प्रकार से बनती हैं। मन ने ग्रहण करने से रुकना नहीं और वासनाओं का अन्त होना नहीं। तो क्या फिर निराश हो जाएँ? नही, ऐसी बात नहीं है।

न्याय–दर्शन का आदेश

न्याय–दर्शन में बहुत आशाजनक तथ्य बतलाया गया है। वह यह कि– मन (युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिंगम्) न्याय. 1.1.16. एक समय में एक ही काम कर सकता है, दो नहीं। चरक–संहिता के शरीर–स्थान में भी मन का यही लक्षण किया गया है :

लक्षण–मनसो ज्ञानस्याभावो भाव एव वा ।।16।।

'ज्ञान होना और ज्ञान न होना, मन का लक्षण है अर्थात् एक काल में एक वस्तु का ज्ञान होना और दूसरी का न होना, या यूँ कहिये कि दो ज्ञानों का एक ही काल में उत्पन्न न होना, मन का लक्षण है।'

मन ने किसी–न–किसी वस्तु को एक समय में पकड़ना ही है। तब इस मन से कहो, भैया! तुमने तो किसी वस्तु को ग्रहण करना ही है, तब नाशवान् संसारी वस्तुएँ क्यों पकड़ते हो? उस अविनाशी, शुद्ध, बुद्ध, निर्मल, ब्रह्म तत्त्व को क्यों न ग्रहण कर लो, जिसके ग्रहण कर लेने से फिर शेष कुछ भी ग्रहण करने योग्य नहीं रहता? इस परिवर्तनशील संसार में सार वस्तु केवल आत्मा ही है, बाकी सारा आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथिवी ही का पसारा है और यह सब नाश होने वाला है। जिस सुन्दर रूप पर तू मुग्ध हो रहा है, जिस लहरी पर तू कान रखे है, जिस कोमलता के लिए तू हस्तीवत् उन्मत्त हो रहा है, जो सुगन्ध तुझे भँवरे की भाँति मृत्यु का ग्रास बनाना चाहती है– यह सब पाँच भूतों की सृष्टि है, और कुछ भी नहीं। यह अभी है, अभी इसका रूपान्तर हो जायेगा।

क्या सारे सम्बन्ध झूठ हैं?

प्यारे भाई से मुझे कितना स्नेह था! मेरे पतिदेव मेरे पर प्राण न्योछावर करते थे। पत्नी कितनी धर्म–परायणा, कितनी सच्ची, सेविका, कितनी रूपवती और कितनी मीठी थी।! मेरे पिता कितने अच्छे थे! मेरे पुत्र कितने आज्ञाकारी थे! मेरा मित्र मेरे लिए सब कुछ बलिदान करता था। मेरी सहेली मुझे कितना प्यार करती थी! मेरा भवन कितना विशाल था! आह, ये कहाँ चले गये? क्यों चले गये? क्या ये सम्बन्ध, ये रिश्ते, यह मित्रता, यह स्नेह, यह प्रेम, यह मोह–ममता इसलिए था कि सदा के लिए जीवित को जलाते रहें? नहीं; ये तो जलाने, वेदना उत्पन्न करने और तड़पाने के लिए नहीं थे। तू ही धोखा खा गया। तूने इन सबको अस्थायी समझा। तूने इस भ्रम में अपने–आपको डाल दिया कि ये सारे सम्बन्ध, ये सारे वैभव, यह धन, यह सम्पत्ति और यह सौन्दर्य सर्वदा बना रहेगा। तू इन्हीं को अपना देवता समझ बैठा और सार वस्तु की ओर ध्यान न दिया :

किस संग कीजे मित्रता, सब जग चालनहार।
निश्चय केवल है प्रभु, सब से करे प्यार।।
धन यौवन यूँ जाएगा, जा विधि उड़त कपूर।
नारायण गोविन्द भज, क्यों चाटे जग–धूर।।

तो क्या ये सारे सम्बन्ध झूठे हैं? कौन कहता है कि ये झूठे हैं? झूठे तो नहीं; हैं तो ठीक, परन्तु सदा रहने वाले नहीं। बस, यही बात समझ लेनी है। फिर संसार के सारे सम्बन्धों, सारे रिश्तों, सारे वैभवों, सारे कष्टों, सुखों, दुःखों के प्रति जो–जो कर्त्तव्य हैं, उन्हें पूरा करते जुए सार वस्तु को प्राप्त करने का यत्न करना है।

केनोपनिषद् का तथ्य

तथ्य की एक और बात केन–उपनिषद् के ऋषि ने बतलाई है, जिससे ज्ञात होता

शेष पृष्ठ 5 पर ☞

www.thearyasamaj.org

ईश्वरीय ज्ञान दो प्रकार का होता है

● श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

स्वाभाविक और नैमित्तिक। स्वाभाविक ज्ञान पशु–पक्षी या मनुष्य आदि सभी को प्राप्त है– जैसे आहार, निद्रा, भय मैथुन, हिंसा, अहिंसा और आत्मसंरक्षण आदि विषय इनमें उन सबका कार्य इस स्वाभाविक ज्ञान के सहारे चल सकता है। अतः परमेश्वर ने मानव की अपेक्षा पशु–पक्षियों को पर्याप्त स्वाभाविक ज्ञान प्रदान किया है। उनकी संतान शीघ्र ही आत्मनिर्भर हो जाती है। परन्तु मानव शिशु को माता पिता या सरंक्षण की आवश्यकता होती है। पशु पैदा होते ही जल में तैरने लगता है, पर मानव का बालक बिना सिखाए तैर नहीं सकता। बाबूई पक्षी ताड़ या नारियल के पेड़ों के पत्ते में जो तिनकों से लटकती हुई घोंसला बनाती है वह किसी कारीगरी से कम नहीं है, किन्तु मानव बिना विद्या शिक्षा के एक महल भी नहीं बना सकता।

मधुमक्खी छता ही नहीं बनाती फूलों से पराग कणों को लाकर उन छतों की नन्हीं–नन्हीं कोशिकाओं में मधु एकत्रित करती है। ये ऐसी उच्चतम कोटि की कारीगरी है जो उसे परमेश्वर द्वारा स्वाभाविक ज्ञान के रूप में प्राप्त है। इनको ये लाखों–करोड़ों वर्ष पूर्व भी इसी प्रकार बनाती थी, आज भी बनाती है और आगे भी बनाती रहेगी। (मकड़ी भी जाल बुनने में माहिर होती है) मनुष्य अभियान्त्रिकी शिक्षा प्राप्त किए बिना, साधारण निर्माण भी नहीं कर सकता। इससे स्पष्ट है कि मानव पशु–पक्षियों के समान केवल स्वाभाविक–ज्ञान पर आधारित न रहकर नैमित्तिक ज्ञान के सहारे उन्नति करने में समर्थ हो जाता है। इसीलिए बालक को जब तक उसके माता पिता और आचार्य विद्या ज्ञान की उपलब्धि नहीं कराते। तब तक वह स्वाध्याय चिन्तन, मनन और ज्ञान का विकास नहीं कर सकते।

वेद कहता कि– **न विजानामि यदिवेदमस्मिनिष्यः सन्नद्धोमनसाचरामि। यदामागन्प्रथमजाऋतस्यादिदवाचो अश्नुवेभागमस्याः॥** (ऋ.1,164,37)

अल्पज्ञान और अल्प शक्ति वाला होने से जीव साधना के बिना साध्य को ग्रहण नहीं कर सकता है। जब वह श्रोत्र (कान) आदि को प्राप्त होता है, तब जानने में समर्थ होता है। जब तक (जीव) विद्या के द्वारा सत्य को नहीं जान लेता, तब तक अभिमान करता हुआ पशु के समान विचरता है।

हमारे विचार से मानव उत्पत्ति काल में आदि मानव सभी अनाड़ी थे, उनमें केवल स्वाभाविक ज्ञान ही था। परन्तु जैसे सहस्रों बालक एक जैसे स्वभाव के नहीं होते उसी प्रकार आदि मानव पूर्व संस्कार के अनुसार सभी एक समान नहीं थे उनमें कुछ तीव्र–बुद्धि वाले पवित्रात्मा भी थे। उन्हीं आत्माओं अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा को ईश्वरीय शक्तियों ने इस लायक बना दिया कि उनके चिन्तन और ध्यान की मुद्रा में नैमित्तिक ज्ञान वेदों के मंत्रों का बोध होने लगा इस प्रकार उन महर्षियों को 'ऋक्, यजु, साम और अथर्व–वेद प्राप्त हो गए।

विद्या को समझने की शक्ति प्रत्येक मनुष्य में होती है किसी में कम या किसी में अधिक। पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय जी जीवात्मा पुस्तक में लिखते हैं कि– 'रामानुज महाशय बिना सीखे हुए ही गणित में ऐसे प्रवीण थे कि बड़े–बड़े गणित, दाँतों तले उँगली दबाते थे। यह गणित का ज्ञान उनके मस्तिष्क में संचित और सुप्त था, किसी अवसर पर या किसी के संकेत से जाग्रत हो गया।

पं. रघुनन्दनशर्मा 'वैदिक सम्पत्ति' में लिखते हैं कि– मनुष्य चाहे जितना ही प्रतिभावान हो, बिना कुछ लक्ष्य कराए बिना सूचना के वह आप ही आप ज्ञानोपार्जन नहीं कर सकता।

इसी प्रकार शायद मैंने किसी पुस्तक में पढ़ा था कि चाय का आविष्कार अपने आप ही नहीं हुआ था, वह कुदरत की देन थी। चीन देश के 'वोमविसागम' जंगल में पानी गरम कर रहे थे। हवा के बहने से उस पानी में पते गिर गए, और वह गरम पानी गुलाबी रंग का हो गया। उसकी सुगंध बहुत अच्छी थी। जब उन्होंने उसका पान किया तब शरीर में गरमी और तरोताजा हो गया। बस.वहीं से उसका ऐसा उत्पादन होने लगा कि उसे चाय के रूप में सारा संसार पीने लगा।

तात्पर्य यह कि मानव उत्पत्ति काल में वेद ग्राहक ऋषियों का गुरु ईश्वर के अलावा दूसरा कोई नहीं था। क्योंकि संसार में जितना भी ज्ञान है उसका आदि स्रोत परमेश्वर ही है। वही आदि गुरु परेश्वर मानव मात्र के कल्याण के लिये आदि सृष्टि में उत्पन्न मनुष्यों को ईश्वरीय ज्ञान के रूप में नैत्तिमिक ज्ञान प्राप्त कराता है। इसी ईश्वरीय ज्ञान को वेद नाम से अभिहित किया जाता है। **"य इमाविश्वाजातान्याश्रवमतिश्लोकेन। प्रच सुवाति सविता॥** (ऋ.5,82,9)

हे मनुष्यो! जो ईश्वर वेद के द्वारा मनुष्यों को सब विद्याओं का उपेदश करता है उसे ही परमगुरु मानना चाहिए।

इस प्रकार नैत्तिमिक ज्ञान की आवश्यकता के विषय में वेद पुनः आदेश देता है कि–

'परमेष्ठ्यभिधीतःप्रजापतिर्वाचि व्याहृतायामन्धो अच्छेतः।

सविता सन्यां विश्वकर्मा दीक्षायां पूषा सोमक्रयण्याम्॥ (यजु.8,54)

यदि ईश्वर वेद विद्या के द्वारा अपने, जीवों को और जगत् के गुण, कर्म, स्वाभावों को प्रकाशित न करता, तो किसी भी मनुष्य को विद्या और इनका ज्ञान (प्राप्त) न हो सकता। और इन (विद्या और विज्ञान) के बिना निरन्तर सुख कहाँ से हो सकता?

वाणी की खोज भी ईश्वरीय सरस्वती शक्ति के विविध स्वरों के छन्दों से प्राप्त हुई।

'बृहस्पतेप्रथमंवाचोअग्रंयत्प्रैरतनामधेयंद धानाः। यदेषांश्रेष्ठयदरिप्रभासीत प्रेणांतदेषांनिहितंगुहाविः॥ (ऋ. 10,71,1) अर्थात् ईश्वर (वेदों) वाणी का स्वामी है। यह वाणी ऋषियों के (ऋषियों से अभिप्राय, उन्हीं दिव्य ऋषियों से है। जिनका पहले वर्णन हो चुका है और जिनसे शिक्षा पाकर श्रुत ऋषि बना करते हैं) हृदयों में उत्पन्न होती है। उसी वाणी को ऋषि अपने हृदय से निकालकर उसके द्वारा वस्तुओं के नामादि उच्चारण करते हैं।

इस प्रकार उन दिव्य ऋषियों ने सर्वप्रथम तीव्र बुद्धि वाले ब्रह्मादि ऋषियों को चारों वेद प्राप्त कराए। उसके पश्चात ऋषि परम्पराओं में वेदों के मंत्र श्रुति रूप में चलने लगे (मंत्रों में तनिक भी भूल चूक नहीं होती थी।

उसके पश्चात उन वेदज्ञ ऋषियों के सम्पर्क में जो जो थे, वे–वे शिक्षा–दीक्षा और सभ्यता से ज्ञानी होने लगे, और जो उनके संपर्क में नहीं आये वे अनाड़ी, जंगली और शिकारी बन गए। इस प्रकार आदि काल से लेकर आज तक दो प्रकार का इतिहास चला आ रहा है। यथा– एक में ऋषि काल से लेकर आज तक सभ्य विद्वान आर्यों का और दूसरे में रावणकाल से लेकर अद्विवान्, असभ्य अनार्यों का।

अतः विद्वान और अविद्वान। सभ्य और असभ्य। भले और बुरे लोगों का इतिहास तो सदा से चला आ रहा है किन्तु गत सौ वर्षों से क्रमशः शिक्षा–दीक्षा से आदिवासी और जंगलियों में बहुत सुधार हुआ है।

प्रश्नः– प्रारम्भ में जब मानव की उत्पत्ति होती है उस समय उनके माता–पिता या गुरु तो होते नहीं जिनसे कुछ सीखकर वे अपना कार्य चला सकें, फिर उन्हें वेद विद्या और भाषा का ज्ञान कैसे हो गया?

उत्तर– मनुष्य बिना साधनों के साध्य को ग्रहण नहीं कर सकता। परमात्मा ने मानव को ज्ञानेन्द्रियाँ क्यों दीं? इसलिए कि उन साधनों से विद्या द्वारा सत्य को जान सके। परमात्मा ने यह भी देखा कि जब मेरे द्वारा प्राणियों में श्रेष्ठ मानव की उत्पत्ति हो गई है, तो यदि उनमें से कुछ को वेद–विद्या से ज्ञानी न बनाया तो, तब तो सब अनाड़ी और जंगली ही रह जाएँगे तब मानव और पशुओं में अन्तर ही कहाँ रहेगा। इसलिए सृष्टि रचयिता परमेश्वर में अपनी व्यवस्था से कुछ उत्कृष्ट कोटि के मनुष्यों के (इसे पुनः लिख रहा हूँ) हृदय में ऐसी अनुभूति प्रदान कर दी जिससे वे तत्त्वों का चिन्तन करने लगे और उस चिन्तन की ध्यान मुद्रा में उन्हें वेद मंत्रों का ज्ञान होने लगा और उसी ईश्वरीय विद्या के साथ उन्हें वैदिक भाषा का भी ज्ञान हो गया।

आज सभी को आश्चर्य होगा कि यह कैसे संभव हो सकता है? तो विचार कीजिए कि उस सर्वज्ञ की शक्ति ने क्या समझकर 'कपास और सेमर वृक्ष को उत्पन्न कर दिया?

तो जो शक्ति अपने प्रिय मानव–मानवी अर्थात् पुत्र–पुत्रियों के परिधान के लिये कपास और सेमर तक को उत्पन्न कर सकती है। जो मानव को ज्ञानेन्द्रियाँ और सोचने विचार करने के लिये बुद्धि पूर्वक मस्तिष्क का निर्माण कर सकती है। जो शक्ति 'रयि और प्राण के अनुसार नारी और पुरुष को बना सकती है। जो शक्ति जीवन उपयोगी पंचतत्त्व को उत्पन्न कर सकती है। जो महाशक्ति सूर्य को अविरत अरबों वर्ष से तेजोमय बनाये रख रही है। जो शक्ति विभिन्न प्रकार के जीव (जन्तु) एवं प्राणियों को उत्पन्न कर सकती है। जो शक्ति प्राणियों को स्वाभाविक ज्ञान दे सकती है। और जो शक्ति परमाणुओं के अन्दर एक अतिसूक्ष्म कण को सृजन कारक बना सकती है, वही ऋषियों के माध्यम से नैमित्तिक ज्ञान के रूप में जिसमें ईश्वर, जीव और प्रकृति के ज्ञान–विज्ञान का विषय है उन सबको बीजात्मक रूप से वेद द्वारा प्रकाशित भी कर सकती है।

प्रश्न– जब आर्य लोग वेदों को सब सत्य विद्या की पुस्तक मानते हैं और उसे ही ज्ञान–विज्ञान का आदि श्रेष्ठ स्रोत भी मानते हैं तो गत लाखों वर्षों के अंदर कोई ऋषि वैज्ञानिक विमान आदि का निर्माण क्यों नहीं कर सके? (इसीलिए 'वैज्ञानिक भौतिकवाद' में राहुल सांकृत्यायन ने लिखा है कि आज तक ब्रह्मवादियों ने एक छछुंदर भी पैदा करके नहीं दिखलाई)।

उत्तर– सबसे पहले सत्य विद्या की पुस्तक वेदों का आविष्कार भारत के ऋषियों ने किया था साथ ही संस्कृत भाषा का भी। छछुंदर तो वैज्ञानिक भी उत्पन्न नहीं कर सकते। सबसे पहले आयुर्वेदीय

शेष पृष्ठ 7 पर ☞

www.thearyasamaj.org

वैदिक विज्ञान की शब्दावली

● कृपाल सिंह वर्मा

उपनिषद् ग्रन्थ वेद मन्त्रों की आध्यात्मिक व्याख्या करते हैं तथा ब्राह्मण ग्रन्थ वेद मन्त्रों की वैज्ञानिक व्याख्या करते हैं। किसी वैज्ञानिक अनुष्ठान को यज्ञ कहते हैं तथा यज्ञशिल्पविद्या (Technology) के जनक होते हैं। जब महर्षि दयानन्द ने उद्घोष किया कि देशवासियों को अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त यज्ञ करने चाहिएँ तो उनका आशय शिल्प विद्या के विकास से था। उनके यजुर्वेद भाष्य से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है। महर्षि दयानन्द का सारा जीवन आध्यात्मिक अन्धकार को मिटाने में ही चला गया, जो उस समय की प्रथम आवश्यकता थी परन्तु फिर भी उनकी कलम से अनायास ही कुछ ऐसे वैज्ञानिक संकेत प्रस्फुटित हो गये जिनके लिए हम सदैव उनके ऋणी रहेंगे। उनके उद्घोष ने कि **"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है"** विज्ञान के विद्यार्थियों का ध्यान वेदों की ओर आकर्षित किया। 'ऋग्वेदादि–भाष्य–भूमिका' में तार विद्या विषय, नौ विमान विद्या विषय आदि स्थलों पर उन्होंने वैदिक मन्त्रों के तकनीकी अर्थ किये। निरुक्त का भाष्य तथा अब सत्यार्थ प्रकाश में वैशेषिक तथा सांख्य सूत्रों की विज्ञान परक व्याख्या ने विद्यार्थियों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया।

वैदिक विज्ञान को समझने के लिए वैदिक विज्ञान के पारिभाषिक शब्दों का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक होता है। यह ज्ञान हमें ब्राह्मण ग्रन्थों से ही मिल सकता है। ऐतरेय ब्राह्मण ऋग्वेद की वैज्ञानिक व्याख्या है। इसी प्रकार शतपथ ब्राह्मण यजुर्वेद की वैज्ञानिक व्याख्या है। निरुक्त का दैवत काण्ड प्राकृतिक शक्तियों का स्पष्ट वर्णन करता है।

वैदिक विज्ञान के अनुसार तीन प्रकार की प्रमुख शक्तियाँ है। भूगोल पर पायी जाने वाली शक्ति अग्नि, अन्तरिक्ष में पाई जाने वाली शक्ति इन्द्र अर्थात् विद्युत् है तथा द्युलोक में पायी जाने वाली शक्ति सूर्य है। अन्य सब शक्तियाँ इन तीनों शक्तियों का ही विस्तार हैं। इन तीनों शक्तियों के कर्म के आधार पर इनके अनेक नाम हो गये हैं।

वैदिक विज्ञान ने संसार में पाये जाने वाले सभी पदार्थों को पाँच भागों में विभक्त कर दिया है। इन्हें वैदिक विज्ञान के पाँच तत्व भी कहते हैं। इनमें जो सबसे सूक्ष्म तत्व है वह आकाश तत्व है। सृष्टि की रचना में सबसे पहले आकाश तत्व का निर्माण होता है। प्रकृति का जो सबसे सूक्ष्म टुकड़ा है जिसे काटा नहीं जा सकता वह वैदिक परमाणु है। साठ परमाणु मिलकर एक अणु का निर्माण करते हैं। आकाश तत्व का एक अणु साठ मूल परमाणुओं से मिलकर बनता है। आकाश तत्व की उपस्थिति का ज्ञान हमें अपने कानों से होता है। आकाश तत्व से अणु जब कम्पन करते हैं तो इससे ध्वनि उत्पन्न होती है। इस ध्वनि को हम अपनी श्रौत ज्ञानेन्द्रिय से ग्रहण करते हैं। जो तत्व जितना सूक्ष्म होता है उसकी व्यापकता उतनी ही अधिक होती है। आकाश तत्व के बिना ध्वनि का संचार नहीं हो सकता। इसी सम्बन्ध में आधुनिक विज्ञान ने ईथर की कल्पना की थी।

आकाश रिक्त स्थान को कहते हैं तथा आकाश–तत्व प्रकृति की प्रथम अणु रूप अवस्था को कहते हैं। ध्वनि उत्पन्न करने के लिए कम्पन करना आवश्यक है। यदि आकाश तत्व में अणु नहीं है तो कौन कम्पन करेगा? तथा यदि आकाश अर्थात् रिक्त स्थान नहीं है तो कहाँ कम्पन करेगा?

हमारी श्रौत्र इन्द्रिय ज्ञानेन्द्रियों में सबसे सूक्ष्म होती है। इसका निर्माण आकाश तत्व से होता है। तभी इसमें आकाश तत्व के कम्पनों को ग्रहण करने की शक्ति होती है।

श्रौत्र इन्द्रिय का देवता अश्विनौ है। अश्विनौ का अर्थ है दो अश्विन। कम्पनों की तीव्रता के अनेक स्तर होते हैं। लेकिन इन्हें दो भागों में बाँटा जा सकता है।

(1) मन्द कम्पन............... अश्विन–1

(2) तीव्र कम्पन.................. अश्विन–2

ध्वनि से शब्द का निर्माण करने के लिए इन दो प्रकार के कंपनों की आवश्यकता पड़ती है। इनको ही वैदिक विज्ञान में "अश्विनौ" कहते हैं।

आकाश तत्व के अणुओं से जिस तत्व का निर्माण होता है उसे वायु तत्व कहते हैं। वायु प्राण रूप होती है। वायु की उपस्थिति का ज्ञान स्पर्श द्वारा होता है। इसको आँखों से नहीं देखा जा सकता। गैस वायु तत्व नहीं है। गैस के अणु जिसकी शक्ति से गति कार्य करते हैं वह वायु है। इन्द्र अर्थात् विद्युत् वायु का ही रूप है। आकाश के दो अणुओं से मिलकर वायु तत्व का एक अणु बनता है अर्थात् वायु के एक अणु में 60×2=120 वैदिक परमाणु होते हैं। वायु तत्व दो प्रकार का होता है– (1) मित्र (Positive Charge), (2) वरुण (Negative Charge)

जब वायु मिथुनीकृत हो जाती है, तो इसका प्रवाह वरुण से मित्र की ओर होता है। तार में विद्युत् है या नहीं इसका ज्ञान स्पर्श से हो जाता है। विद्युत् अधिक आवेश से कम आवेश की ओर चलती है। अधिक आवेश की स्थिति को वरुण तथा कम आवेश की स्थिति को मित्र कहते हैं।

वायु तत्व का दूसरा रूप अग्नि है। अग्नि उच्च तापक्रम से निम्न तापक्रम की ओर बहती है। वैदिक विज्ञान में निम्न तापक्रम की अग्नि को मित्र तथा उच्च तापक्रम की अग्नि को वरुण कहते हैं। हमारी स्पर्श इन्द्रिय वायु तत्व से बनती है तभी तो यह विद्युत् तथा सर्दी गर्मी को स्पर्श से जान लेती है। ये मित्र वरुण देवता स्पर्श इन्द्रिय के देवता हैं। यह मित्र वरुण का वैज्ञानिक स्वरूप है।

वायु से स्थूल तत्व ज्योति है जिसे प्रकाश कहते हैं। वैदिक विज्ञान में तीन प्रकार की ज्योतियों का वर्णन मिलता है– 1. अग्नि ज्योति 2. विद्युत् ज्योति 3. सूर्य ज्योति।

हमारी चक्षु प्रकाश तत्व से मिलकर बनी है तभी तो ये प्रकाश के प्रति संवेदनशील होती है। चक्षु का देवता अग्नि–सोम है। अग्नि–सोम देवता युग्म रूप है। यह आँखों की देखने में सहायता करते हैं। अग्नि प्रकाश स्वरूप होता है तथा सोम अन्धकार स्वरूप होता है। प्रकाश तीव्रता अनेक स्तर की होती है लेकिन इसे दो भागों में बांटा जा सकता है। (1) तीव्र प्रकाश युक्त बिन्दु (2) मन्द प्रकाश युक्त बिन्दु। आँख के पर्दे पर किसी वस्तु का चित्र अन्धकार तथा प्रकाश के योग से बनता है। किसी बिन्दु पर प्रकाश की अधिकता तो किसी पर अन्धकार की अधिकता होती है। किसी वस्तु पर पड़ने वाले प्रकाश की तीव्रता उन बिन्दुओं पर असमान होती है। वैदिक विज्ञान में प्रकाश की तीव्रता को अग्नि तथा प्रकाश की मन्दता को सोम कहते हैं। यही अग्निसोम देवता आँखों का देवता है जो देखने में सहायक करता है।

चौथा तत्व आपः है जिसे जल तत्व भी कहते हैं। जिसका गुण रस है जो रसना से ग्रहण किया जाता है। पाँचवाँ तत्व पृथिवी है जिसका गुण गन्ध है जिसका ग्रहण नासिका से होता है। संसार में दो प्रकार के पदार्थ पाये जाते हैं– (1) गन्धहीन– आपः तत्व, (2) गन्धयुक्त– पृथिवी तत्व।

इस प्रकार वैदिक विज्ञान के पाँच तत्व हैं– (1) पृथिवी (2) आपः (3) प्रकाश (4) वायु (5) आकाश। इसमें पृथिवी तत्त्व तथा जल तत्त्व आधुनिक विज्ञान में Matter के अंतर्गत आते हैं तथा अग्नि, वायु और आकाश ये Energy के अन्तर्गत आते हैं।

253 शिवलोक, कंकरखेड़ा, मेरठ
फोन– 9927887788

☞ *पृष्ठ 3 का शेष*

तत्त्व-ज्ञान

है कि मन तो भगवान् की अत्यन्त बहुमूल्य देन है। यह तो उसी का संकेत है, उसी का आदेश है। तब इसे बुरा क्या कहें और इससे भयभीत क्यों हों? केनोपनिषद् के ये दो मन्त्र देखिये :

तस्यैष आदेशो यदेतद्विद्युतो व्यद्युतदा इतीति
न्यमीमिषदा इत्यधिदैवतम्।। 4।।

अथाध्यात्मं यदेतम् गच्छतीव च मनोऽनेन
चैतदुपस्मरत्यभीक्ष्णं संकल्पः।। 5।।
(चतुर्थ खण्ड)

'उस ब्रह्म का यह आदेश है– संकेत है, जो यह विद्युत् का अकस्मात् चमकना है; वह आधिदैविक जगत् में उस ब्रह्म को बतलाने वाला साधन है' ।। 4 ।।

'अब इस आध्यात्मिक जगत् (शरीर) में, जो चलता हुआ सा मन है और इससे बार–बार संकल्प करना है, वह उसी का स्मरण कराता है' ।। 5 ।।

गर्जते हुए मेघों में विद्युत् अपनी चमक–दमक दिखलाकर प्रभु का आदेश देती है और शरीर में चंचल मन भगवान् की याद दिलाता है। जैसे विद्युत् एक अत्यन्त शक्तिशाली वस्तु है, ऐसे ही मन भी बड़ा शक्तिशाली अन्तः इन्द्रिय है। आप विद्युत् द्वारा संसारी जीवों के हितार्थ तथा कल्याणार्थ अनेकों कार्य सिद्ध कर सकते हैं, और इसी विद्युत् को मनुष्य–संहार के लिए भी प्रयोग में ला सकते हैं। ऐसे ही मन द्वारा आप मनुष्य–जीवन के परमोद्देश्य मोक्ष को भी प्राप्त कर सकते हैं, और इसी मन द्वारा मनुष्य–जीवन को बिगाड़कर गधे, कीट–पतंग, वृक्ष की योनियों में गिरा सकते हैं। मन एक शक्ति है, जिधर चाहो लगा लो।

– क्रमशः

www.thearyasamaj.org

महर्षि का पत्र साहित्य ही हिन्दी का प्रथम पत्र साहित्य

● डॉ. अशोक आर्य

मानव का जीवन आज अत्यन्त व्यस्त जीवन हो गया है। वह कम समय में अधिक कार्य करना चाहता है। इसका कारण है कि आज का जीवन पहले से कहीं अधिक व्यस्त हो गया है। इस वैज्ञानिक युग में समय का अभाव निरन्तर बढ़ता ही चला जा रहा है। वैसे भी आज का कोई भी व्यक्ति अपनी सब आवश्यकताओं को एक ही स्थान पर रहते हुये पूर्ण नहीं कर सकता तथा न ही इस हेतु वह विभिन्न स्थानों पर जा सकता है। इस का कारण है समय का अभाव। यदि वह ऐसा करता है तो वह इधर–उधर भागने में ही लगा रहेगा तथा जीवन व्यापार उसका पीछे ही छूट जावेगा। समय के अभाव व कार्य की व्यस्तता के कारण बने इस अभाव को दूर करने के लिये उसने जिन साधनों का आश्रय लिया उनमें पत्र भी एक है। कालावधि के पश्चात् इन पत्रों के स्थायी प्रभाव को समझा गया तथा इन पत्रों के संकलन की आवश्यकता अनुभव की गयी। अतः ये पत्र भी संकलित कर पुस्तक रूप में लाये गये। पत्रों का यह रूप ही हमारे प्रस्तुत लेख का विषय है। आओ इस पर विचार करें।

मानवीय जीवन में पत्रों का विशेष महत्व होता है। पत्र लेखन मनुष्य की एक सहज व स्वाभाविक तथा अनिवार्य क्रिया है। अपने दूरवर्ती मित्रों, सम्बन्धियों, व्यापारार्थ व अन्य अनेक कारणों से अनिवार्य रूप से मनुष्य को पत्राचार करना ही पड़ता है। जब किसी व्यक्ति विशेष के पत्र न केवल उसकी गरिमा को ही प्रभावित करते हैं अपितु ये मानव समाज को भी प्रभावित करते हैं, तो इनका महत्व अधिक बढ़ जाता है। इनसे व्यक्तिगत सम्बन्धों की नींव सुदृढ़ होती है। आत्मीयजनों से पत्र व्यवहार द्वारा अपूर्व आनन्द मिलता है। इनसे जीवन का सूनापन दूर होता है।

पं. वियोगीहरि के अनुसार "पत्रों में अजेय शक्ति होती है, यदि हम अपना हृदय उनमें उँड़ेल सकें। जितने भी भाई मुझे मिले, दो सभी पत्रों की देन हैं। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ के चरणों की धूलि भी पत्रों की ही बदौलत मिली।"

वास्तव में पत्रों में व्यक्ति का व्यक्तित्व छुपा है, जिससे उसकी मानसिकता, भाषा शैली, सोचने व कार्य करने का ढंग, धार्मिक आस्थाएं, राजनैतिक सोच, मानवीय चेतना आदि सभी कुछ मिलता है। प्रस्तुत पंक्तियों के लेखक के जीवन में आए निखार का प्रमुख आधार भी लेखक का पत्राचार ही है। अतः पत्र लेखन मानव जीवन की चेतना में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

पत्र और महर्षि सरस्वती

महर्षि दयानन्द सरस्वती एक महान् समाज सुधारक थे। कार्यक्षेत्र में उतरने से पूर्व महर्षि ने सम्पूर्ण भारतीयों का मानो एक प्रकार से नाड़ी परीक्षण किया। समाज में जड़ जमाए अनेक रोगों, यथा अन्ध विश्वास, रूढ़ियों, कुरीतियों, नारी की दयनीय अवस्था, स्त्रीशिक्षा, छुआछूत, गोवध, वेद विमुखता, सरीखे गम्भीर रोगों को खोजकर कार्यक्षेत्र में पर्दापण करते ही, इन सब रोगों का नाश करने के लिए भीषण शंखनाद किया। एतदर्थ व्याख्यानों से ही नहीं अनेक शास्त्रार्थों द्वारा भी अन्धकार के पर्दे मानव मात्र की आँखों से उठाने का प्रयास किया।

जब कोई भी व्यक्ति बहाव के विपरीत चलने का प्रयास करता है तो समग्र संसार उसे जानने, उसे समझने व उसे देखने के लिए उद्वेलित हो उठता है। महर्षि दयानन्द के क्रान्तिकारी विचारों ने जनमानस के हृदयों पर कुछ ऐसा ही प्रभाव डाला। सब तरफ सब में एक ही जिज्ञासा थी कि वह अनूठा जादूगर कौन है? वह कैसा है? आदि आदि, किन्तु सभी लोग उन तक पहुँच नहीं सकते थे। इसका समाधान उन्होंने पत्रों के माध्यम से पाया। अतः अपनी जिज्ञासा को शान्त करने के लिए उन्होंने पत्रों द्वारा अपना शंकाएं स्वामी जी को भेजनी आरम्भ कीं। इन पत्रों के उत्तर स्वामी जी से प्राप्त कर ये लोग अपने को धन्य मानने लगे।

अनेक बार स्वामी जी के भक्त भी उन्हें पत्रों से भविष्य की योजनाओं से अवगत होते थे व अपनी जिज्ञासाओं का समाधान करते थे। अनेक बार तो स्वामी जी स्वयं भी अपने भक्तों के माध्यम से कई आदेश भेजा करते थे। आर्य समाज की स्थापना के पश्चात् स्वामी जी का पत्र लेखन अत्यधिक बढ़ गया। ज्यों–ज्यों आर्य समाजों का विस्तार होता चला गया त्यों त्यों स्वामी जी को पत्राचार भी अधिक करना पड़ा। इस प्रकार स्वामी जी के पत्रों की संख्या हजारों में चली गई।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र साहित्य

महर्षि जी ने अपने जीवन काल में जो पत्र व्यवहार किया, उनके देहावसान के पश्चात् उनके एक–एक शब्द को सँभालने की दृष्टि से महात्मा मुन्शी राम (स्वामी श्रद्धानन्द) ने स्वामी जी के पत्रों को ढूँढ़–ढूँढ़ कर एकत्र किया।

महर्षि दयानन्द का एक एक शब्द सुरक्षित हो, इस संकल्प के साथ उपर्युक्त संकलन के प्रकाशन के कुछ किया। तत्पश्चात् पं. चमूपति के सम्पादकत्व में गुरुकुल काँगडी विश्व विद्यालय ने एक अन्य पत्र संग्रह "ऋषि...?

पत्रों से लक्षित महर्षि का व्यक्तित्व

महर्षि दयानन्द सरस्वती के समय को भारतीय इतिहास में पुनर्जागरण काल के रूप में जाना जाता है। इसमें महर्षि की अभूतपूर्व प्रतिभा, पाण्डित्य, निर्भीकता, व्यक्तित्व आदि के कारण देश भर में विशेष रूप से उत्तर भारत में वैदिकधर्म का डंका बजने लगा। महर्षि के पत्रों से उनके व्यक्तित्व की झलक इस प्रकार मिलती है:

जीवनी सूत्र

अनेक महापुरुष अपने पत्रों में अपने जीवन का क्रम बद्ध उल्लेख कर देते हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ऐसा करने का प्रयास नहीं किया, तो भी पत्रों से जीवनी सम्बन्धी कुछ संकेत या सूत्र मिल जाते हैं। स्वामी जी द्वारा पं. कालूराम को लिखे पत्र में आर्य समाज की प्रगति के उल्लेख से कुछ जीवन सूत्र इस प्रकार प्राप्त होता है ...यथा "... रावलपिण्डी में आर्यसमाज हो गया है। इस स्थान (जेहलम) में भी होने की आशा है। पंजाब में बहुत ठिकाने समाज बन गए हैं। वेद धर्म की बड़ी उन्नति है।"

इस प्रकार स्वामी जी के पत्रों में न केवल स्थानों की यात्रा का वर्णन है अपितु शास्त्रार्थों व आर्य समाज की प्रगति सम्बन्धी उल्लेख भी है।

चारित्रिक विशेषताएं

स्वामी जी के चरित्र के कुछ ऐसे पहलू हैं, जिनका ज्ञान हमें केवल पत्रों से ही होता है। यथाः

हिन्दी अनुरागः

मातृभाषा गुजराती तथा संस्कृत के अनुरागी होते हुए भी हिन्दी के प्रति स्वामी जी का असीम अनुराग था। वह इसे आर्यभाषा कहते थे। लाहौर के जवाहर सिंह के पत्र का स्वामी जी ने इन शब्दों में उत्तर दिया "..... जो तुमने इतनी बड़ी चिट्ठी आर्यभाषा में लिखी, यही हमने तुम्हारा शुद्धि जानी।"

भारी मात्रा में स्मरण पत्र भिजवाये। तभी तो विजयेन्द्र स्नातक लिखते हैं कि "हिन्दी भाषा के प्रचार और प्रसार से आर्य समाज का योगदान सर्वविदित है। आर्य समाज के संचालक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आज से एक शताब्दी पूर्व अपना लेख हिन्दी भाषा में आरंभ किया था। स्वामी जी हिन्दी भाषा को आर्यभाषा कह कर पुकारते थे।"

निर्भीक व स्पष्टवादी

ये दोनों स्वामी जी की विशेषताएं थीं। वह सत्य कहने में किसी से भी न डरते थे। तभी तो 1 सितम्बर 1883 को जोधपुर नरेश महाराज जसवन्त सिंह के नाम पत्र में उनके दोषों का भी वर्णन इस प्रकार किया "एक वैश्या, जो कि नन्हीं कहलाती है, उससे प्रेम, उसका अधिक संग और अनेक पत्नियों से न्यून प्रेम रखना आप जैसे महाराज को सर्वथा अयोग्य है।" चाहे इस स्पष्टवादिता के लिए प्राण भी गंवाने पड़े।

स्वामी जी के पत्रों से यह भी पता चलता है कि वह एक कुशल संगठक, प्रबंधक व व्यवस्था पक भी थे। पूरा हिसाब–किताब लेने, प्राप्त कर्ता से हस्ताक्षर लेने तथा कर्मचारियों के सुयोग्य पारखी थे। स्वामी ईशानन्द जी को लिखे पत्र से यह स्पष्ट होता है कि ".... जो आपने अध्ययन किया है, उसी में वार्तालाप करें और कह देवें कि मैं कुछ वेद शास्त्र नहीं पढ़ा, किन्तु मैं तो आर्यावर्त देश का छोटा विद्यार्थी हूं और कोई बात या काम ऐसा न हो कि जिस से अपने देश का हास होवे..."

दृष्टिकोण

वेदों के अपूर्व प्रचारक महर्षि दयानन्द का मुख्य नारा था "वेदों की ओर लौटो", उनके सरल और निष्कपट व्यक्तित्व के अनेक उदाहरण मिलते हैं। अनूठी पत्र लेखन शैली के धनी थे। पत्र लेखन में स्वस्ति, श्री के स्थान पर संबोधन में व्यक्ति के नाम को अभिवादन आनन्दित रहो ही होता था। अनौपचारिक, सरलता, स्पष्टता, संक्षिप्तता आदि उनके पत्रों की विशेषताएं हैं। स्वमी जी ने अपने पत्रों द्वारा अनेक लोगों को प्रेरित व प्रोत्साहित करते हुए हिन्दू संस्कृति तथा देश हितार्थ भरसक प्रयास किया।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के पत्र साहित्य का हिन्दी साहिॅत्य में स्थान

पत्र लेखन की संस्कृत साहित्य में अति प्राचीन परम्परा चली आयी है। राजकीय पत्र ही प्रायः पत्रों के रूप में जाते जाते थे। "मेघदूत" व कालीदास के "अभिज्ञान शाकुन्तलम्" में "मदन लेख" नाम से प्रेम पत्र मिलते हैं महाकवि बाण की "कादम्बरी" भी इसी प्रकार की अन्य कृति है। पक्षी, राहगीर, घुड़सवार व विप्रों द्वारा भी पत्र भेजे जाते रहे हैं। विवाहों का निर्णय नाइयों व ब्राह्मणों द्वारा आज भी पत्र भेजने की परम्परा प्रचलित है। मध्य युग में सर्वप्रथम डाकियों द्वारा 1586 में शेरशाह सूरी ने डाक भेजने की प्रथा आरम्भ की। यही डाक सेवा आज मानव सभ्यता का अभिन्न अंग बन गई है।

हिन्दी पत्र लेखन परम्परा मे हमें सर्वप्रथम रासो ग्रन्थों में सन्देश रासक में मिलती है। पृथ्वीराज रासो के "पद्मावती समय" नामक सर्ग में भी मिलता है। जायसी के 'नागमती वर्णन' से भी पत्रों का उल्लेख मिलता है। तुलसीदास की "विनय पत्रिका" भी हिन्दी पत्र साहित्य का एक उदाहरण है। सूरदास का 'भ्रमर गीत' भी प्रेम पत्र का सुन्दर चित्रण देता है। राणा से दुःखी

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

www.thearyasamaj.org

पूज्य महात्मा आनन्दस्वामी जी महाराज को जैसा मैंने देखा, सुना और पढ़ा

● रामस्वरूप शास्त्री

महान् स्वतन्त्रता सेनानी तपोधन संन्यासी स्वामी देवानन्द जी सरस्वती ने 1959 में 5 अक्तूबर से 11 अक्तूबर तक हिसार मण्डल के अन्तर्गत डोभी ग्राम में हरियाणा प्रदेश का एक महत्वपूर्ण वेद प्रचार एवं बहम्चर्य शिक्षण शिविर का आयोजन किया था। शिविर में आर्यजगत् के लगभग 40 विद्वान्, उपदेशक, साधु, संन्यासी आदि महानुभाव उपस्थित हुए। पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज भी मुख्य अतिथि के रूप में इस शिविर में पधारे थे। मैं 1959 में दयानन्द ब्राह्ममहाविद्यालय में अन्तिम कक्षा विद्यावाचस्पति का छात्र था। हम 5 छात्रों ने भी लगातार 27 दिन इस शिविर में भाग लिया था। मैंने श्रद्धेय महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के आध्यात्मिक प्रवचन को सुना उनकी हँसमुख प्रवचन शैली सभी श्रोताओं को आकर्षित कर रही थी। उनके प्रवचनों को सभी श्रोताओं ने मंत्रमुग्ध होकर सुना। यह उनके त्यागमय सात्विक जीवन का ही प्रभाव कहा जायेगा। सम्भवतः वे उन दिनों आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के प्रधान रहे होंगे। स्वामी देवानन्द जी महाराज ने उनका धन्यवाद करते हुए उन्हें सभा के लिये 501 रु. का दान दिया। अपने लिये श्री महात्मा जी ने केवल 11/– रुपए की ही दक्षिणा स्वीकार की।

अब मैं श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के जीवन से सम्बन्धित संस्मरण प्रस्तुत कर रहा हूँ– इनमें से एक संस्मरण मैंने किसी वैदिक विद्वान् संभवतः पं. त्रिलोक चन्द्र जी महोपदेशक के मुखारबिन्द से सुना था तथा एक संस्मरण आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के मुखपत्र 'आर्य मित्र' में पढ़ा था। विवरण निम्न प्रकार से है:–

संस्मरण – 1 यह घटना उस समय की है जब भारत विभाजन हो चुका था। हिन्दु–मुस्लिम झगड़े चरम सीमा पर थे। महात्मा आनन्द स्वामी जी (महात्मा खुशहाल चन्द्र जी) पाकिस्तान के किसी शहर के मकान के ऊपर वाले कमरे (चौबारे) में अपने तीन–चार भक्तों के साथ ठहरे हुए थे। ऊपर जाने वाली सीढ़ियों के नीचे वाले किवाड़ सांकल लगा कर बन्द किये हुए थे। आतताई मुसलमानों ने उस दिन निश्चय किया था कि आज इन्हें (महात्मा खुशहाल चन्द्र को) जीवित नहीं छोड़ेंगे। वे अपने हाथों में भाले, गण्डासियाँ आदि लेकर ज़ोर–ज़ोर से चिल्लाते हुए कह रहे थे कि किवाड़ खोलो, नहीं तो आग लगा देंगे, आज तुम सब को जीवित नहीं छोड़ेंगे। यह सब सुनकर महात्मा जी के सभी साथी डर के मारे सहमे हुए थे। उन्हें जीवित बचने का कोई उपाय नहीं सूझ रहा था, परन्तु महात्मा खुशहाल चन्द्र के चेहरे पर चिन्ता या डर का कोई चिह्न नहीं था वे उन भयभीत सज्जनों को कह रहे थे 'ईश्वर पर विश्वास रखो और श्रद्धा से गायत्री मंत्र का जाप करो। ईश्वर अवश्य ही हमारी रक्षा करेंगे'। डरते क्या न करते जोर–जोर से गायत्री का पाठ करने लगे। महात्मा जी को मुस्कराते देख कर सभी आश्चर्य चकित थे। सभी कह रहे थे देखते हैं ईश्वर कैसे रक्षा करेगा। जब महात्मा जी के साथ सभी गायत्री मंत्र का जाप कर रहे थे और आततायी मुसलमान किवाड़ तोड़ने में लगे हुए थे, उसी समय एक व्यक्ति घोड़े पर चढ़ कर आया और चिल्ला–चिल्ला कर कहने लगा भाग जाओ, हिन्दू मुस्लिम सेना आ गई है। दोनों ओर से हिन्दू मुसलमानों को सुरक्षित निकाला जा रहा है। यह सुन कर सभी आततयी भाग गये और सेना ने साथियों सहित महात्मा जी (आनन्द स्वामी जी महाराज) को सुरक्षित भारत में पहुँचाया। यह था महात्मा जी का ईश्वर पर अटल विश्वास और इसी अटल विश्वास ने उन सब की रक्षा की। मृत्युपर्यन्त महात्मा आनन्द स्वामी विश्वास अटल रहा।

संस्मरण–2 यह संस्मरण आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के मुख्य पत्र ''आर्य मित्र'' के 21 अप्रैल 1963 के अंक से ज्यों का त्यों लिया गया है।

'आनन्द स्वामी जी विदेश प्रचार से लौटे'

आर्य जनता को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि आर्य नेता एवं प्रतिष्ठित संन्यासी श्री आनन्द स्वामी जी महाराज अफ्रीका और मॉरीशस क्षेत्रों में अपनी प्रचार यात्रा समाप्त कर भारत लौट आये हैं। हमने इन्हीं पंक्तियों में उन की यात्रा की सफलता के लिये मंगल कामनायें की थीं और आज उन्हें अपने मिशन में सफल हो लौटने पर आर्य जगत् की ओर से पुनः हार्दिक बधाई देते हैं। हम आशा करते हैं कि वे समय–समय पर इसी प्रकार प्रवासी भारतीयों और विदेशस्थ मानवों को वैदिक धर्म का सन्देश सुनाने के लिये विदेश यात्रायें करते रहेंगे और आर्य समाज या वैदिक धर्म की सार्वभौमिकता को सिद्ध करने का व्यवहारिक का प्रयत्न करते रहेंगे। हम पुनः स्वामी जी के सकुशल आगमन पर हार्दिक प्रसन्नता प्रकट करते हैं।

मुख्याधिष्ठाता
गुरुकुल आर्यनगर (हिसार)
मो. 9466613413

☞ *पृष्ठ 4 का शेष*

ईश्वरीय ज्ञान दो ....

औषधियों का आविष्कार भारत के ऋषियों ने किया था। वृष्टि यज्ञ विज्ञान का आविष्कार वैदिक ऋषियों ने किया था। अष्टांगयोग का आविष्कार पतंजलि ऋषि ने किया था। ऋषि वैज्ञानिक भारद्वाज ने विमान का अनेक मॉडल एवं उनके यंत्रों के निर्माण का वर्णन किया था। सामवेद से सात स्वर एवं राग रागिनी का उद्गम ऋषियों द्वारा हुआ था। शून्य का आविष्कार भारत में ब्रह्म गुप्त ने किया। अंकगणित का आविष्कार 200 ई. पूर्व भास्कराचार्य ने किया। बीज गणित का आविष्कार भारत में आर्य भट्ट ने किया। ऐसे ही भारत में ई. पूर्व अनेक आविष्कार हुए थे।

जैन और बौद्धकाल के पश्चात और भी आविष्कार हो सकता था, क्योंकि ज्ञान–विज्ञान का बीज जो वैदिक ऋषियों के ग्रंथो में मौजूद था, उसकी तरफ राजाओं ने ध्यान नहीं दिया और न ज्ञानी गुणी शिल्पियों को विज्ञान की अनुसंधान की तरफ प्रोत्साहित किया। इसके दो कारण थे, एक तो आपस का वैर विरोध और दूसरा उनके कुलगुरुओं ने अपने पौराणिक विचारों से वेदों की विद्या को आच्छादित कर रखा था। इसके अलावा वेदों के अनर्थ भाष्यकारों के चलते सबकी आँखों पर तान्त्रिक एवं पौराणिकताओं की पट्टी बँधी हुई थीं। तभी तो वेदानुकूल ईश्वरोपासना और वैदिक विद्या के अनुसंधान की जगह वेद विरुद्ध श्रीमद्भागवत और शिवपुराण आदि कथाओं का श्रवण, मूर्तिपूजा, श्राद्ध, मृत्यु भोज, केदारनाथ, बद्रीनाथ आदि चारों धाम की यात्रा, देवी जागरण, मुर्तियों में प्राण प्रतिष्ठा, भूत–प्रेत व झाड़–फूँक, गंगा स्नान, बलिप्रथा, सतीप्रथा, रुक्मिणी को छोड़ राधा कृष्ण प्रेम प्रसंग (रासलीला) फलित ज्योतिष आदि (इतने विषय हैं– कि गणना कठिन होगी) का प्रचार वेदों के नाम पर होने लगा था। पुराणों ने हमारे इतिहास को, हमारी सामाजिक व्यवस्था को विकृत कर दिया।

इसके अलावा जिस प्रकार विदेशी मुसलमानों ने भारत के मंदिरों और मूर्तियों को तोड़ फोड़कर अरबी छत सोने–चाँदी हीरे जवाहरातों को लूटा, उसी प्रकार अंग्रेजों ने भी भारत को 200 वर्षों में कंगाल बना दिया और साथ ही हमारे आर्य साहित्य को भी नष्ट–भ्रष्ट कर दिया।

इसके पहले सन् 712 के बाद से विदेशियों का आवागमन होने लगा था, और हमारे ऋषियों के ग्रंथों का पण्डितों से भावार्थ जानकर अनेक प्रकार की विद्याओं की जानकारी प्राप्त करते रहते थे।

यदि उस समय के राजाओं ने भरद्वाज आदि ऋषियों के ग्रन्थों को उन अनुभवी शिल्पियों को दिखलाया होता और उन लोगों ने गवेषण किया होता तो भारत में गुप्तकाल के (2000 वर्ष) पूर्व ही विमान आदि का निर्माण होने लग जाता। पर ऐसा न होकर भारत के लोग, हरे राम, हरे कृष्ण तथा मंदिरों–मूर्तियों को पूजने एवं अपने कुलगुरु और पुजारियों के आदेश संस्कार में पड़कर शिवादि का पूजा पाठ तथा गंगा स्नान से पापों को धुलवाते रह गए और उधर विदेशी अंग्रेज आदि को जब ज्ञात हो गया कि भारत के ऋषियों के ग्रंथों में विमान आदि का वर्णन है तब उन्होंने गवेषणा, परीक्षण करते करते सन् 1903 में ओर्विली तथा विलवर अमेरिकन ने वायुयान का निर्माण कर दिया। केवल 200 वर्षों में विज्ञान वेत्ताओं ने बहुत तेजी से उन्नति की।

आज सारा संसार वैज्ञानिकों के विज्ञान को ही सत्य मान रहा है और उसका उदाहरण भी दे रहा है, किन्तु संसार यह भूल गया है कि उस ज्ञान–विज्ञान और सभ्यता का आदि स्रोत किसी न किसी रूप में भारत से ही संस्कृत भाषा की तरह सब जगह फैला था।

मु.पो. मुरारई, जिला–वीरभूम
(प. बंगाल) 731219
मो. 9046773737
दि. 7.8.13

www.thearyasamaj.org

सत्यार्थ प्रकाश के विरोध में मुसलमानों का जुलूस

● प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

सन् 1986 ई. में मुसलमानों के दबाव में सत्यार्थ प्रकाश की प्रतियाँ पुलिस उठा ले गयी थी। किन्तु पुलिस कमिश्नर ने जब तहकीकात कराई और हमारा शिष्ट मंडल पुलिस कमिश्नर से मिला और हमने सत्यार्थ प्रकाश का पक्ष पुलिस कमिश्नर के सामने रखा तो पुलिस कमिश्नर से सत्यार्थ प्रकाश के विरुद्ध पुलिस कार्यवाही को अनुचित घोषित कर दिया और बड़े सम्मान के साथ पुस्तकें हमें लौटा दी गयीं। वार्षिकोत्सव की इस घटना से मुसलमानों की भीतर क्षोभ अत्यधिक बढ़ गया और भीतर ही भीतर मुसलमानों में आग सुलगती रही। थोड़े ही दिनों में विरोध का स्वरूप और भी अधिक उग्र हो गया और मुसलमानों ने सत्यार्थ प्रकाश पर प्रतिबंध लगाने के लिए झण्डा, बैनर लेकर जुलूस निकाला और जमकर नारेबारी की।

घटना कुछ इस प्रकार हुई। कोलकाता में बड़ा अच्छा जनप्रिय पुस्तक मेला लगता है। कई लाख लोग पुस्तक मेला में जाते हैं। पुस्तक मेला के दर्शक पुस्तकें खरीदते हैं और बहुत सारी पुस्तकें जिन्हें खरीदते तो नहीं किन्तु देखते हैं, और वह खड़े-खड़े पुस्तक से परिचित होने का अवसर पा जाते हैं। कोलकाता का पुस्तक मेला अखिल भारतीय स्तर का होता है और सारे देश में बड़े-बड़े प्रकाशक और विक्रेता अपना-अपना प्रदर्शन करते हैं। कोलकाता की प्रायः सभी धार्मिक संस्थाओं की अपनी-अपनी प्रदर्शनी, दुकान आदि वहाँ लग जाती है। प्रचार की दृष्टि से आर्य समाज कोलकाता भी अपना एक बुक स्टॉल बड़ी सज-धज के साथ प्रदर्शनी में लगाता था। उन दिनों पुस्तक मेला विक्टोरिया मेमोरियल के पूर्व में खुले हुए विशाल मैदान में लगता था। आर्य समाज के बुक स्टॉल को वैदिक साहित्य का प्रतिनिधि रूप में प्रदर्शन करने का आर्य समाज कलकत्ता के अधिकारियों का प्रयास रहता था। मूल वेद संहिताएं, वेदों के भाष्य, उपनिषद्, दर्शन, अन्य महत्वपूर्ण पुस्तकें वहाँ प्रदर्शित की जाती थीं। बहुत सारे लोग वेदों को खरीदते तो नहीं थे किन्तु वेदों का दर्शन करना धर्म मानकर आर्य समाज के स्टॉल में आते थे। आर्य समाज का साहित्य हिन्दी, बंगला, उर्दू, अंग्रेजी आदि अनेक भाषाओं में उपस्थित रहता था। आर्य समाज के सिद्धान्त ग्रन्थों को विशेष रूप से स्टॉल में सजाया जाता था। स्वाभाविक था कि स्वामी दयानन्द जी की महत्वपूर्ण पुस्तकें वहाँ सुलभ रखी जायें। इसी नीति के अनुसार स्वामी दयानन्द जी महाराज की पुस्तकें सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, संस्कार विधि, स्वामी जी की जीवनी एवं उनकी अन्य पुस्तकें महत्वपूर्ण ढंग से प्रदर्शित की जाती थीं। इस प्रचार का यथेष्ट लाभ मिलता था। सत्यार्थ प्रकाश हिन्दी, बंगला, उर्दू, अंग्रेजी आदि भाषाओं में प्रस्तुत रहता था।

आर्य समाज के पंडाल में भक्त और विरोधी दोनों प्रकार के लोग आते थे। कुछ उपद्रवकारी इस्लामी तत्वों ने यह नोट कर लिया कि आर्य समाज के स्टॉल में सत्यार्थ प्रकाश कई भाषाओं में खुलेआम बिक रहा है। अब यह खबर कोलकाता के उस विरोधी मुस्लिम समुदाय के पास भी पहुँच गई जो वार्षिकोत्सव पर सत्यार्थ प्रकाश को जब्त नहीं करवा पाये थे और भीतर ही भीतर कुढ़ रहे थे।

इन विरोधी मुसलमानों के मन में भी विरोध की भावना उग्र रूप से काम कर रही थी। वे पुस्तक मेले की प्रतीक्षा कर रहे थे, जब उन्हें पता लग गया कि पुस्तक मेले में आर्य समाज के बुक स्टॉल पर सत्यार्थ प्रकाश हिन्दी, उर्दू, बंगला, अंग्रेजी आदि सभी भाषाओं में खुलेआम बिक रहा है तो उनके विरोध की भावना कुछ और अधिक उग्र होने लगी। मुसलमान लीडरों ने सत्यार्थ प्रकाश पर प्रतिबंध लगाने की मांग लेकर पुस्तक मेला में जाने और विद्रोह करने का प्रोग्राम बना लिया। सत्यार्थ प्रकाश के विरोध में बैनर, झण्डे, पट्टियां, काले बैज आदि सब चुपके-चुपके तैयार करा लिए गये।

> **इन विरोधी मुसलमानों के मन में भी विरोध की भावना उग्र रूप से काम कर रही थी। वे पुस्तक मेले की प्रतीक्षा कर रहे थे, जब उन्हें पता लग गया कि पुस्तक मेले में आर्य समाज के बुक स्टॉल पर सत्यार्थ प्रकाश हिन्दी, उर्दू, बंगला, अंग्रेजी आदि सभी भाषाओं में खुलेआम बिक रहा है तो उनके विरोध की भावना कुछ और अधिक उग्र होने लगी। मुसलमान लीडरों ने सत्यार्थ प्रकाश पर प्रतिबंध लगाने की मांग लेकर पुस्तक मेला में जाने और विद्रोह करने का प्रोग्राम बना लिया। सत्यार्थ प्रकाश के विरोध में बैनर, झण्डे, पट्टियां, काले बैज आदि सब चुपके-चुपके तैयार करा लिए गये।**

एक शुक्रवार को दोपहर की नमाज के बाद चितपुर रोड पर स्थित बड़ी मस्जिद से जुलूस निकालने की योजना बना ली गयी। शुक्रवार का दिन मुसलमानों के लिए विशेष महत्व का होता है और प्रायः मुसलमान सामूहिक सम्मिलित इबादत करने के लिए मस्जिदों में इक्ट्ठे होते हैं। पुस्तक मेला के दौरान उसी कालावधि में शुक्रवार के दिन नमाज के बाद खूब गरमा-गरम उत्पाती व्याख्यान हुए और 300-400 मुसलमान बैनर, झण्डा, पट्टियां लिए, बाजुओं में विरोध के लिए काली पट्टी बाँधे जुलूस की शक्ल में चितपुर रोड सड़क पर आ गये। सत्यार्थ प्रकाश के विरुद्ध जोशीले नारे लगाते हुए पुस्तक मेला की ओर चल पड़े। चितपुर की मस्जिद से पुस्तक मेला की ओर जाने के लिए पुलिस हेडक्वार्टर लालबाजार के बगल से सड़क जाती है। स्वाभाविक है कि पुलिस हेडक्वार्टर में यह खबर पहुँच गयी होगी और हमारा अनुमान है कि पुलिस कमिश्नर ने पुस्तक मेले में शान्ति सुव्यवस्था की दृष्टि से निर्देश दे दिया होगा कि जुलूस को पुस्तक मेला में पहुँचने से पहले सुविधाजनक जगह पर रोक दिया जाए और पुस्तक मेला में कोई व्यवधान आने न पावे। जो भी हुआ हो पुलिस के शासन सुव्यवस्था की बात है, हम तो परिणाम को देखकर अनुमान ही कर सकते हैं।

अस्तु, चितपुर की बड़ी मस्जिद से ढाई-तीन कि.मी. तक जूलूस विरोध और विक्षोभ प्रदर्शन करता हुआ रानी रासमणि रोड तक गया, वहां पुलिस ने जुलूस को रोक लिया। थोड़ी देर नारे-बाजी और लेक्चर बाजी हुई। जुलूस जैसे गया था वैसे ही तितर-बितर हो गया किन्तु यह समाचार पुस्तक मेला के अधिकारियों और प्रबंधकों तक पहुंच गया। दैनिक पत्रों में भी छप गया।

कोलकाता महानगर में आर्य समाज एक धार्मिक, समाज-सुधारक, समाज सेवी संस्था के रूप में प्रसिद्ध है। आर्य समाज के विद्यालय, आर्य समाज का वार्षिकोत्सव सबकी जनता में प्रतिष्ठा है। आर्य समाज ने देश के विभाजन के पूर्व और विभाजन के समय एवं विभाजन के पश्चात् बड़ा प्रतिष्ठित रिलीफ का कार्य किया है। बंगाल में बाढ़ तो प्रायः आती ही रहती है और दैवी आपदाओं के समय बाढ़, भुखमरी, देश के विभाजन, विभाजन के पश्चात् शरणार्थी समस्या, साम्प्रदायिक दंगों के समय आर्य समाज की रिलीफ व्यवस्था का सुनाम कोलकाता के लोगों में अच्छा यश पाया है। सरकार भी आर्य समाज के इस सेवाकार्य, सुधार के कार्य, शिक्षा के कार्य, आदि देखकर आर्य समाज को सम्मान की दृष्टि से देखती है। मुसलमानों के इस विरोध के समय भी पुलिस और सरकार में आर्य समाज की यह भूमिका काम कर रही थी। मुस्लिम कठमुल्ले तो झगड़ालू होते ही हैं यह सबको विदित है। पुलिस कमिश्नर पर पिछले वर्ष की घटना का, हमारे शिष्ट मण्डल का प्रभाव रहा ही होगा।

पुस्तक मेला के व्यवस्थापक इस विरोध प्रदर्शन की घटना के बाद आर्य समाज के स्टॉल पर आये और उन्होंने भी सत्यार्थ प्रकाश पुस्तक देखी। स्टॉल पर हमारे प्रबंधक से कहकर गये कि आर्य समाज का कोई अधिकारी आये तो हमसे भेंट करवाना। हमारे पास फोन आया और हम अगले दिन सायंकाल के समय पुस्तक मेले में गये। यूं भी, रोज नहीं, किन्तु कई बार हम व्यवस्था देखने, स्टॉल की सफलता का जायजा लेने पुस्तक मेला में जाते ही थे। अगले दिन प्रातः काल कोलकाता के प्रसिद्ध अंग्रेजी दैनिक स्टेट्समैन में हमने यह खबर पढ़ भी ली थी।

अयाचित वरदान– हम जब पुस्तक मेला में गये और प्रबंधक से मिले तो वे कुछ अधिक उत्साह और प्रसन्नता की मुद्रा में थे। बातचीत के दौरान हमने उन्हें स्वामी दयानन्द और आर्य समाज तथा अपने साहित्य के संबंध में थोड़ी अधिक जानकारी दी। आज से 25 वर्ष पहले बंगाल की उस पीढ़ी के लिए सोहरावर्दी का डायरेक्ट एक्शन-डे-सीधी कार्यवाही पूर्वी बंगाल से हिन्दू शरणार्थियों का पलायन आदि भूला न था। पुस्तक मेला में प्रबधक ने बड़ी सहानुभूति से बात की और हमें आश्वासन दिया कि पुस्तक मेला में हम कोई उत्पाद नहीं होने देंगे।

मुसलमानों का यह विरोध प्रदर्शन और समाचार पत्रों में इसकी खबर से उस वर्ष सत्यार्थ प्रकाश की खूब बिक्री हुई। बंगला और उर्दू में भी सत्यार्थ प्रकाश की प्रतिया खूब धड़ल्ले से बिकती रहीं। हमारा भी उत्साह बढ़ा। आर्य समाज के कार्यकर्ता अब और मुस्तैदी से व्यवस्था संभालने लगे। मुसलमानों का विरोध हमारे लिए वरदान सिद्ध हुआ और सत्यार्थ प्रकाश का आशा से अधिक प्रचार हुआ।

ईशावास्यम्
पी-30, कालिन्दी, कोलकाता-700089
फोन (033) 25222636
चलभाष:09432309602

www.thearyasamaj.org

परमेश्वर की उपासना कैसे करें

● स्वामी ध्रुवदेव परिव्राजक

ओ३म् यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।

(यजु. अ.32/मं.14)

पदार्थः– हे (अग्ने) सर्वज्ञ स्वयंप्रकाशस्वरूप होने से विद्या को जनाने वाले परमेश्वर! (**यां मेधां**) जिस विज्ञानवती यथार्थ धारण करने वाली बुद्धि वा धन को (**देवगणाः पितरश्चोपासते**) विद्वानों के समूह, यथार्थ पदार्थ विज्ञान वाले रक्षा करने वाले ज्ञानी लोग और योगी लोग धारण करते हैं या प्राप्त होके सेवन करते हैं (**तया मेधया**) उस बुद्धि वा धन के साथ (**अद्य**) इसी समय कृपा से (**माम्**) मुझको प्रशंसित बुद्धि वा धन वाला कीजिए। (**स्वाहा**) इसको आप अनुग्रह व प्रीति से स्वीकार कीजिए, जिससे मेरी जड़ता सब दूर हो।

(आर्याभिविनय + ऋ. दया. कृत यजुर्वेद भाष्य + सत्यार्थ प्रकाश)

व्याख्यानः–

हे परमात्मन्! आप अपनी कृपा से, जो अत्यन्त उत्तम सत्यविद्यादि शुभगुणों को धारण करने के योग्य बुद्धि है, उससे युक्त हम लोगों को कीजिए, कि जिसके प्रताप से देव अर्थात् विद्वान् और पितर अर्थात् ज्ञानी होके हम लोग आपकी उपासना सब दिन करते रहें। स्वाहा अर्थात् (1) (**सु–आहेतिवा**) अर्थात् सब मनुष्यों को अच्छा, मीठा, कल्याण करने वाला और प्रियवचन सदा बोलना चाहिए। (2) (स्वं प्राहेति वा) अर्थात् सब मनुष्य अपने पदार्थ को ही अपना कहें, दूसरे के पदार्थ को कभी नहीं अर्थात् जितना–जितना धर्मयुक्त पुरुषार्थ से उनको पदार्थ प्राप्त हो, उतने ही में सदा संतोष करें। (3) (स्वा–वागोहति वा) अर्थात् मनुष्यों को यह निश्चय करके जानना चाहिये, कि जैसी बात उनके ज्ञान के बीच में वर्तमान हो, जीभ से भी सदा वैसा ही बोलें, उससे विपरीत नहीं। (4) (स्वाहुतं हविर्जुहोतीति वा) अर्थात् सर्व दिन अच्छी प्रकार सुगन्ध आदि द्रव्यों का संस्कार करके सब जगत् के उपकार करने वाले होम को किया करें। और "स्वाहा" शब्द का यह भी अर्थ है कि सब दिन मिथ्यावाद को छोड़ के सत्य ही बोलना चाहिए।

भावार्थः–

मनुष्य लोग परमेश्वर की उपासना और आप्त विद्वान् की सम्यक सेवा करके शुद्धविज्ञान और धर्म से हुए धन को प्राप्त होने की इच्छा करें और दूसरों को भी ऐसे ही प्राप्त करावें।

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्।।

ऋग्वेद मं. 10/सू. 121/मं.10)

पदार्थः–

हे (**प्रजापते**) सब प्रजा के स्वामी रक्षक परमात्मा! (**त्वत्**) आपसे (**अन्यः**) भिन्न दूसरा कोई पदार्थ (**ता**) उन (**एतानि**) इन (**विश्वा**) सब (**जातानि परि बभूव**) उत्पन्न हुए जड़ चेतनादिकों को नहीं तिरस्कार करता है अर्थात् आप सर्वोपरि हैं या इन सब पर बलवान् हैं या इन सब उत्पन्न हुए जड़ चेतनादि में व्याप्त हैं। अतः (**यत्कामाः**) जिस–जिस पदार्थ की कामना वाले होकर (**वयम्**) हम लोग (**ते**) आपका (**जुहुमः**) आश्रय लेवें या आपकी प्रशंसा करें या उपासना करें (**तत्**) वह–वह कामना के योग्य वस्तु (**नः**) हमको (**अस्तु**) आपकी कृपा से प्राप्त होवे जिससे (**वयम्**) हम लोग (**रयीणाम्**) विद्या सुवर्णादि धनों के (**पतयः**) रक्षक स्वामी (**स्याम**) होवें।

(सं.वि. + ऋ. दया. कृत यजुर्वेदभाष्य)

भावार्थ (1):–

जो परमेश्वर से उत्तम, बड़ा, परमैश्वर्ययुक्त, सर्वशक्तिमान् पदार्थ कोई भी नहीं है तो उसके तुल्य भी कोई नहीं। जो सब का आत्मा, सब का रचने वाला, समस्त ऐश्वर्य का दाता ईश्वर है उसी की भक्ति विशेष और अपने पुरुषार्थ से इस लोक के ऐश्वर्य और योगाभ्यास के सेवन से परलोक के सामर्थ्य को हम लोग प्राप्त हों।

(ऋ. दया. कृत यजुर्वेदभाष्य 23/मं. 65)

भावार्थ (2):–

हे मनुष्यों! जो सब जगत् में व्याप्त है, सब के प्रति माता पिता के समान वर्तमान है उस जगदीश्वर की ही उपासना करो। इस प्रकार अनुष्ठान से तुम्हारी सब कामनायें अवश्य सिद्ध होंगी।

(ऋ. दया. कृत. यजुर्वेदभाष्य अ. 10/मं. 20)

दर्शन योग महाविद्यालय
आर्यवन, रोजड़, पत्रा.–सागरपुर
जि.–साबरकांठा (गुजरात) 383307
फोन नं. 02770–287418, 287518

विशेष आलेख

भारतीय संस्कृति : महान एवं विलक्षण क्यों

● हरिकृष्ण निगम

आज की नई पीढ़ी में गलाकाट प्रतिद्वन्द्विता की अंधी दौड़, धनार्जन व अन्य विविध भोगवादी इच्छाओं की पूर्ति में आधुनिकीकरण के मानदण्डों का एक ऐसा वातावरण उभरा है कि भारतीय संस्कृति की महत्ता समझने में यदि किसी को कठिनाई प्रतीत होती है तो कोई आश्चर्य नहीं। परन्तु यह परिदृश्य पूर्ण नहीं है, हतोत्साहित होने की भी कदाचित आवश्यकता नहीं है। आज भी अधिकांश व्यक्ति ऐसे हैं जो भारतीय संस्कृति के अनुरूप आचरणों का पूर्णरुपेण पालन नहीं कर पाते हैं, परन्तु अपने अच्छे संस्कारों व पारम्परिक प्रथाओं व धरोहरों के कारण भारतीय संस्कृति में सम्मिलित ज्ञान व मूल्यों के प्रति आस्था रखते हैं; उसका आदर करते हैं और उसे प्राणप्रिय भी समझते हैं।

आज जब हम इस विषय पर विचार करते हैं कि क्या भारत की हिन्दू–बौद्ध आत्मा ही हमारी संस्कृति एवं सभ्यता का पर्याय है जिसका गुणगान करते हुए विश्व भर के भारतवेत्ता–इण्डोलाजिस्ट–प्राच्य विद्या विशारद एवं प्रखर चिन्तक कई सदियों से इसे दुनिया की भावी आशा कह चुके हैं; तब हमारे यहाँ के कुछ राजनीति–प्रेरित दुराग्रही क्या विचलित हो उठते हैं? वह वस्तुतः चिन्ता का विषय है कि इसी परम्परा में डा. मैक्समूलर, शायेनहार, विल डूरां, लुई रेनू, आन्द्रे मारलो, अर्नाल्ड टायनवी, हाइनरिख जिमर, रोया रोतां ए.एल. बाराम जैसे प्रकाण्ड विद्वान थे, जिन्होंने बार बार हमारे विश्वासों की वापसी का उल्लेख करते हुए यह भी कहा कि हिन्दू–बौद्ध परम्पराएँ ही विश्व की नई भावी सर्वमान्य एवं सर्वव्यापी आस्थाएँ होंगी। यही मिशन भारत के सांस्कृतिक व धार्मिक पुनर्जागरण के दो ध्रुवों पर स्थित सुदृढ़तम स्तम्भ कहे जाने वाले स्वामी विवेकानन्द और स्वामी दयानन्द का भी था।

भारतीय संस्कृति की प्रकृति क्या है? क्या यह मानना कि हमारी संस्कृति और जीवन–शैली हमारे धर्म की ही अभिव्यक्ति है? क्या अपनी सांस्कृतिक जड़ों का सम्मान करना या धार्मिक पहचान को राष्ट्र की अवधारणा में समन्वित करना औचित्यपूर्ण नहीं है? भारतीय संस्कृति से हमारा तात्पर्य अधिकांशतः वैदिक संस्कृति से है जो भारत की अप्रतिम धरोहर है तथा जिसका ज्ञान, वेद, उपनिषद, पुराण, रामायण व महाभारत आदि पुरातन ग्रंथों में सन्निहित है। सर्वमान्य रूप से वैदिक संस्कृति अत्यन्त पुरातन है और उसमें संकलित अनेकानेक रत्न जैसे भगवद्गीता व विदुरनीति बाद की अन्य संस्कृतियों में भी समाहित हैं। वेदों का ज्ञान शाश्वत है, समय–सापेक्ष नहीं, निश्चयात्मक है संशयात्मक नहीं। यह ज्ञान बहुविध, व्यापक दृष्टिकोण पर आधारित है तथा सूक्ष्मतम तत्त्वों का विश्लेषण करता है।

भारतीय संस्कृति की विलक्षणता व आधुनिक काल में सर्वसमावेशी हिन्दू आस्था का निष्पक्ष तुलनात्मक अध्ययन, समय के बड़े अन्तराल के बाद भी, हजारों बार विश्व के सामने प्रकट हो चुका है कि इसमें एक से अधिक धर्मों एवं विचारों का सहअस्तित्व एक स्वाभाविक बात है। दुनियां भारत के ऋग्वेद को मानवता का प्राचीनतम दस्तावेज मानते हुए विश्व का प्राचीनतम ज्ञानकोष मानती है। भारत एक प्रवाह है, एक स्वभाव है, एक सम्पूर्ण जीवन दृष्टि है। यही संस्कृति हमें स्वाभिमानी एवं परमवैभवशाली भारत के सपने मूर्त करने को प्रेरित करती है। विश्वविख्यात विचारक आर्नाल्ड टॉयनबी, जिनका निधन 86 वर्ष की आयु में 1975 में हुआ था, भारत को अपने में एक समूचा विश्व और विश्व का महानतम गैर–पश्चिमी समाज मानते थे। उन्होंने अगली सदी में सर्वेश्वरवाद की वापसी की भविष्यवाणी की थी तथा कहा था कि ऐकान्तिक और मात्र एकेश्वरवादी अपने अपने ईश्वर को श्रेष्ठतर तो कहते हैं पर उनमें सहिष्णुता की भावना न्यूनतम होती है। ऐसे धर्मों के अनुनाईयों से अपने अतीत से कटने की अपेक्षा की जाती है और दूसरे धर्मों को छलपूर्वक स्थानच्युत करने या धर्मान्तरण के मन्तव्य से ही असहिष्णुता व समाज में संघर्ष जन्म लेते हैं। अनेक प्राच्य विद्या या पौर्वात्य अध्ययन विशारद यह तथ्य कई बार स्पष्ट कर चुके हैं कि बलपूर्वक या प्रलोभन द्वारा मतान्तरण मूल मानवाधिकारों का घृणित हनन है। विशारद जहाँ तक सार्वान

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

www.thearyasamaj.org

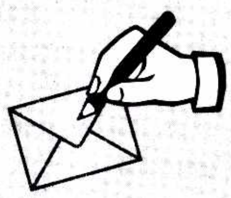

पत्र/कविता

साधु भेष में भ्रम व्यापार पनपता

वर्तमान में साधु-सन्त की बढ़ती हुई कतार।
सामाजिक जीवन में क्यों नहिं कर पा रही सुधार।।

साधु-संत का जीवन तो जग हिताय होता है।
उनका वचनामृत विषमस्थिति विष समूल धोता है।।

उनकी सत्संगति से जन की आधि-व्याधि मिटजाती।
सतोगुणी, सतयुगी प्रभा जग-जीवन में छिटकाती।।

लाख-लाख जनता सुनती नित, उनके विशद् विचार।
फिर भी सामाजिक जीवन में दिखता नहीं सुधार।।

ऐसा लगता, साधु भेष में भ्रम-व्यापार पनपता।
जो दोहन, विश्वास-आस्था का जनता की करता।।

निर्मल बाबा से कई बाबा साधु भेष धारण कर।
पनप रहे जनता की श्रद्धा अरु धन के शोषण पर।।

वैज्ञानिक युग में भी जनता झांसे में आ जाती ।
रंगे सियारों का अन्त वह परख नहीं क्यों पाती।।

क्योंकि, तर्क कसौटी का वह लेती नहिं आधार।
सामाजिक जीवन में जिससे बढ़ता कद् आचार।।

सृष्टि नियम विपरीत कभी कुछ कार्य नहीं हो सकता।
कृत कर्मों का फल बिनु भुगते किस विधि भी नहि टलता।।

टोने और टोटकों से हल होती नहीं समस्या।
यथा रोग समुचित है तद्वत् करना योग्य चिकित्सा।।

कोई नहीं समस्या जग में लाइलाज होती है।
हर मुश्किल आसान कर्मयोगी को ही होती है।।

यदि सुधार तुम सामाजिक जीवन में लाना चाहो।
तो भ्रम-भटकन दूर करो, जन में पुरूषार्थ जगाओ।।

सुप्त सिंह के मुख में खुद नहीं घुसता कभी शिकार।
संकल्पित उद्यम-बल होता कार्य-सिद्धि आधार।।

दया शंकर गोयल
1554 डी. सुदामा नगर
इंदौर (म.प्र.)

कैसे देखें अपनी 66 वर्ष की उपलब्धियाँ

स्वतन्त्रता के बाद 66 वर्ष पूरे हो चुके हैं व 67वें वर्ष में देश प्रवेश कर चुका है। **कैसे देख रहा हूँ देश की उपलब्धियों को, उसका एक आध्यात्मिक दृष्टिकोण प्रस्तुत कर रहा हूं।**

एक बड़ा परिवार एक छत के नीचे रहता था। बहुतों के घर कच्चे ही हुआ करते थे। हाँ शहर में रहने वालों के घर पक्के होते थे। घर में काफी सदस्य होते थे। बहनें, भाई, विवाहितों के आगे बच्चे, माता-पिता, चाचा-चाची, ताया-ताई, दादा-दादी और कई बार दूसरे रिश्तेदारों व मित्रों के बच्चे भी पढ़ाई, काम की तलाश इत्यादि के लिये आकर रहा करते थे। कुछ कमाते थे, कुछ नहीं भी कमाते थे फिर भी एक दूसरे को सहन करते थे। एक दूसरे के लिये प्यार व त्याग की भावना थी व बड़ों का सम्मान था। एक दूसरे के प्रति शिकायतें कम होती थीं। दुख की घड़ियों में दुख बाँटने वाले बहुत होते थे। हाँ शिक्षा कम थी, केवल शहरों में बिजली होती थी। अक्सर पानी भर कर लाना पड़ता था। स्वास्थ्य सेवायें न के बराबर थीं। हाँ, जीवन शैली ऐसी थी कि व्यक्ति बीमार कम होता था।

आज उसी परिवार के सदस्य अलग अलग शानदार मकानों में रहते हैं। जीवन की सब सहूलियतें है- कारें, मोबाईल, अच्छी स्वास्थ्य सेवायें, काफी पैसा जिस के द्वारा अपना भविष्य भी सुरक्षित महसूस करते हैं। पर फिर भी मन अशांत है, दिल में भय रहता है।

जितना अधिक पाते हैं उतना ही भय बढ़ता जाता है। बहुत गजब का भय है! माता-पिता अपने बच्चों से भयभीत रहते हैं, कई बार कुछ पूछने से कतराते हैं। एक दूसरे के लिये आदर प्रेम भाव बहुत कम हो गया है। खिंचे-खिंचे रहते हैं। एक भाई को दूसरे भाई के परिवार के बारे में दोस्तों से या बीच वालों से पता लगता है क्योंकि वह share करना ही नहीं चाहता। सहनशीलता की बात छोड़ो, एक दूसरे पर क्रोधित होने का या नीचा दिखाने का अवसर ढूँढते हैं। सब धन दौलत होने पर भी असन्तोष व जीवन में शून्यता है। समय नहीं है, हर कोई जल्दी में है take care of yourself तो कह सकते हैं, पर कुछ करना है तो समय नहीं। हर किसी को थोड़े समय में बहुत कुछ पाना है और जब सब कुछ नही मिलता तो क्रोध व निराशा सामने आ रही है। डिग्रियाँ बहुत हैं पर समझ कम हो रही है। अच्छी सेवायें होने के बावजूद बीमारियाँ कहीं अधिक, कारण जीवन जीने की शैली भूलते जा रहे हैं। कारें, मोबाइल, शानदार मकान, ऊँची degrees होने के बावजूद हम में बहुतों को सभ्य नहीं कहा जा सकता। कारण दूसरों के लिये संवेदना की कमी। कुछ भी करते हुये हम यह नहीं सोचते कि इस के करने से दूसरे पर क्या असर होगा। हम हर समय अपने हित, सुख व आराम के बारे में सोच रहे हैं। उदाहरण के लिये कारों में तरह-तरह के होर्न व safety devices fit करवा रहे हैं यह जानते हुए भी कि यह आस पड़ोस वालों की नींद हराम कर देती है। परिवार का अर्थ बन गया है मैं, मेरी पत्नी व दो बच्चे।

जबकि उम्मीद की जाती थी कि शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं व बेहतर आमदनी से हम अधिक खुश होंगे व विश्व के आगे हमारी छवि सुधरेगी, उसके स्थान पर गन्दगी, बदबू, धूल, शोर, व्यवहार में रूखापन व अभद्रता, मानवीय गुणों की कमी, आसपास के वातावरण के लिये असहनशीलता व छोटी-छोटी बात पर झगड़ा आज हमारी पहचान बनती जा रही है। **ऐसा लगता है कि देश का कानून हमारे दरिंदेपन को लगाम देने में असमर्थ है वरना बलात्कार नियम को सख्त बनाने का कोई तो असर सामने आता। सच पूछो तो कोई असर नहीं है। इस चीज ने एक प्रश्न खड़ा कर दिया है- क्या हम लोकतन्त्र के लायक हैं?**

कारें, मोबाइल व दूसरी सुविधाएं तो 20वीं सदी में आई है पर मानव जाति तो असंख्य पीढ़ियों से है। यदि इन लाखों वर्षों से मानव जाति पनपी है तो उसका आधार ये कारें, मोबाइल न होकर और सब कुछ है और वह है दूसरे के लिये त्याग व प्यार की भावना व संवेदनशीलता।

धर्म

जबकि धर्म है ही उन शाश्वत गुणों का नाम- सत्य, सदाचार, स्नेह, न्याय, अहिंसा, दया, करुणा व सम्वेदना जिनको जीवन में धारण करने से मनुष्य स्वयं तो सुखी बनकर उन्नति व समृद्धि की ओर अग्रसर होता ही है साथ ही अन्य प्राणियों को भी सुखी बनाता है। आज भारत में जो हम देख रहे हैं वह धर्म नही बल्कि धर्म के नाम पर आडम्बर है। शोर शराबा इसकी मुख्य पहचान है। हमारे कर्मकाण्ड ऐसे हैं जो कि दूसरे का सुख आराम छीन लेते हैं। धर्म का ऐसा स्वरूप समाज में झगड़े, फसाद की जड़ बन रहा है व देश को आगे ले जाने की अपेक्षा पीछे की ओर ले जा रहा है। यदि भारत इतने लम्बे समय तक गुलाम रहा है तो इसका कारण धर्म का यह बिगड़ा हुआ स्वरूप ही है जिसे यहाँ के धर्माचार्यो ने अपने स्वार्थ के लिये चलाये रखा। सब से दुर्भाग्यपूर्ण बात यह है कि हम इतिहास पढ़ते तो हैं पर सबक नहीं सीखते। न ही हम ईश्वर-भक्ति का ठीक मतलब समझ सके हैं।

राष्ट्र

आज हमारे लिये सबसे अधिक चिन्ता का विषय है अपने ही देश में देशद्रोहियों की तेजी से बढ़ती संख्या। सरकार जानती है पर अपने वोटों के लोभ के कारण मानना नहीं चाहती। ईद के मौके पर काश्मीर के कई भागों में देश विरोधी नारे व वहां के मुख्य मन्त्री का बयान देना कि यह तो कई सालों से हो रहा है व उसके पिता का एक कदम और बढ़ कर कहना- "गुजरात में इससे कहीं अधिक हुआ था तब भी सेना नहीं बुलाई थी"- कहने का अर्थ है मन्त्री महोदय साम्प्रदायिक दंगों व देशद्रोही

शेष पृष्ठ 11 पर

www.thearyasamaj.org

☞ पृष्ठ 9 का शेष

भारतीय संस्कृति :....

विश्वविद्यालय और बाद में अमेरिका के येत विश्वविद्यालय में आमंत्रित आचार्य डा. लुई रेनू का कहना है कि हिन्दूधर्म के लिए दर्शन एक बौद्धिक कसरत मात्र न होकर एक आध्यात्मिक अनुभूति रही है। डा. रेनू ने हिन्दू धर्म के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित विभिन्न विषयों पर 40 से अधिक ग्रंथ लिखे थे।

यह दोहराना कि पिछली दो शताब्दियों के जर्मन, रूसी, फ्रांसीसी और अंग्रेजी भाषा के महान लेखकों ने हमारे देश को मानवजाति का पालना, प्रजातंत्र की जननी, सभ्यता का प्रांगण, इतिहास की मां, जीवन के लक्ष्यों के लिए सर्वाधिक विकल्पों की उपलब्धि वाला देश कहा है। इन साभिप्राय वर्णित उक्तियों का एक ही अर्थ है कि हिन्दू संस्कृति भारतीय संस्कृति है और भारतीय संस्कृति की अमिट छाप सम्पूर्ण जगत की संस्कृति पर है। विचार, वाणी और क्रिया के जिस रूप को हिन्दू संस्कृति के नाम से पुकारा जाता है, उसका स्वरूप है उपनिषदों एवं इतिहासों में दिए गए सन्देशों के अनुकूल जीवन ढालना। केवल हमारी संस्कृति ही आज इस बात पर गर्व कर सकती है कि अनेक झंझावतों के बावजूद सहस्रों वर्षों से यह जीवन्त है, अविच्छिन्न है और आज भी यह भारतीय समाज का असली दर्पण है।

यह संस्कृति जैसे ऊपर इंगित किया गया है, लगभग पूरे एशिया में सदैव व्याप्त हो रही है जिसे सुविधा के लिए जम्बूद्वीप भी कहा जाता था। इस सम्पूर्ण क्षेत्र की संस्कृति को ही आर्य–संस्कृति कह सकते हैं। कालान्तर में भौगोलिक, राजनीतिक, जनसांख्यिक परिवर्तनों के कारण, अलग अलग जीवन पद्धतियों के कारण विकास हुए पर उसी संस्कृति के मूल उपादानों अर्थात् मान्यताओं, परम्पराओं, जीवन–मूल्यों और इतिहास के घटनाक्रमों ने काफी कुछ बदल डाला। पर आज भी इन सबका निकटतम रूप हिन्दू ताने–बाने से जुड़ा है। कतिपय अन्वेषकों एवं विचारकों के दस्तावेज तो चकित भी कर देते हैं। जैसे फ्रान्सीसी विद्वान जैकालियट ने अपने ग्रंथ 'बाइबिल इन इण्डिया' में यहाँ तक लिखा कि "भारत विश्व का आदि देश है, वह सबकी जननी है।" कुक टेलर नामक इतिहासकार ने कह डाला कि मिश्री सभ्यता को हिन्दुओं से प्रेरणा मिली। जर्मन विद्वान विंकलर तुर्की में भारत की प्राचीन छाप और अवशेष ढूँढते थे जबकि सर विलियम जोन्स व दक्षिणी अमेरिका के पेरु, ग्वारेमाला आदि में सबसे पहले भारतीय आख्यानों के पदचिह्न पाने का वर्णन करते थे। श्रीमती एनी बेसेन्ट तो यूनान एवं रोम से भी पहले वहाँ से लेकर दक्षिण पूर्वी एशिया, मध्य एशिया एवं आस्ट्रेलिया तक में हिन्दू उपस्थिति पर अपने ग्रंथों में सैकड़ों पृष्ठ लिख चुकी थीं। हमारी संस्कृति का विश्वव्यापी विस्तार एक चमत्कार से कम नहीं था। (बेबीलोनिया और भारत के जनजीवन की समानता पर विशेषज्ञों की दर्जनों कृतियाँ उपलब्ध हैं। यह मात्र उस अन्तहीन प्रक्रिया की झलकें हैं जो गतिमान विश्व में आज भी हिन्दुत्व की प्रासंगिकता इंगित करती है। वैसे सिद्धांत के तौर पर हिन्दुत्व अपने में मान्यता एवं उपासना के सभी स्वरूपों का बिना किसी के चयन या त्याग के यथावत समावेश करता है। इसका कारण है कि हिन्दू आस्था परमात्मा के विविध स्वरूपों में उसकी अभिव्यक्ति का सम्मान करती है। इसलिए हमारी मानसिकता सभी उपासंना पद्धतियों का आदर करती है। हिन्दुत्व इसलिए भी सनातन संस्कृति का अंग है क्योंकि वह सभी के लिए, न्यायपूर्ण व्यवहार पर अवलम्बित है।

इन सब के बावजूद भी कभी कभी लगता है कि भारत ने अपने इतिहास की हथकड़ियाँ पहनी हुई हैं। यहाँ तक कि ऊपर से विरोधी दिखने वाले बड़े विदेशी लेखक एवं पत्रकार भी कह चुके हैं कि भारत उनकी नस–नस में बसा है, वह उनकी कल्पना का उद्‌गम है, एक गहरे, असीमित जनस्रोत वाला कुआँ है जिसने उनकी प्यास बुझाई है। इसका चप्पा चप्पा उन्हें संजीवनी देता है। वे सब इस देश को हिन्दू धर्म, संस्कृति, समग्र चिन्तन, विचारधाराओं, परम्पराओं एवं इतिहास के सन्दर्भ में देखते हैं। वस्तुतः भारत का इतिहास व इसकी संस्कृति सारे उपमहाद्वीप का ही इतिहास है– यह एक सांस्कृतिक इकाई है, आज की सिमटी हुई भौगोलिक सीमा नहीं। यह एक विचार भी है, एक दर्शन व सभ्यता भी। यह देवभूमि है, पितृभूमि है। आज भी इसे लोग वीर प्रसविनी, ज्ञानदायिनी, शस्य श्यामला और रत्नाभरणों से परिपूर्ण होने के सपने देखते हैं।

यद्यपि हिन्दुत्व की आत्मा परिभाषा से कभी बहिष्कारवादी नहीं, समावेशधारी रही है पर इसी का लाभ उठाकर अनेक आक्रान्ता हमारी आदर्शवादी दृष्टि को अपमानित करते रहे थे। साथ ही आयातित पश्चिमी विचारों का आज के युग में लगातार लोहा काफी गहराई से आत्मा में भरा जाता रहा है। आज के समय के नए तलाशे मुहावरों के अनुरूप हमारी संस्कृति की विलक्षणताओं को युवापीढ़ी के समक्ष फिर से प्रभावी रूप से प्रस्तुत करने की आवश्यकता है। देशप्रेम के जागरण के लिए उन्हीं की विपणन पद्धति के साँचे में हमें अपनी बात कहनी होगी। जनसामान्य को सम्मिलित कर हम राष्ट्र के पुनरुत्थान के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण पूर्वपीठिका की रचना कर सकते हैं। हिन्दू शब्द के इर्द–गिर्द राजनीतिबाजों की क्षुद्रता ने काफी धूल जमा करने की कोशिश की है जिसको कदाचित स्वामी विवेकानन्द, वीर सावरकर व योगिराज अरविन्द के हिन्दू शब्द के उपयोग व उनके सन्दर्भों से राजनीतिज्ञों के हर खिलवाड़ व दुष्प्रचार से बचाया जा सकता है।

ए–1002 पंचशील हाईट्स, महावीर नगरकान्दिवली (पं.), मुम्बई–400067
दूरभाष– 28606451 मो. 9820215464

☞ पृष्ठ 6 का शेष

महर्षि का पत्र साहित्य ...

मीरा ने भी तुलसीदास को पत्र लिखा था, किन्तु ये सभी पत्र काव्यमयी थे तथा इन्हें संकलन रूप में नहीं पाया जाता।

आज आधुनिक नवजागरण के युग को हिन्दी के गद्य युग के नाम से माना जाता है। इस युग में सर्वाधिक पत्र व्यवहार महर्षि दयानन्द सरस्वती ने किया। हिन्दी साहित्य में गद्यात्मक स्वरूप के अन्तर्गत जो पत्र साहित्य के रूप में सर्वप्रथम प्रकाशित हुआ, उसको महात्मा मुन्शीराम ने संकलन कर सन् 1010 ईस्वी में "ऋषि दयानन्द के पत्र व्यवहार, भाग 1" के अन्तर्गत प्रकाशित किया।

इससे स्पष्ट होता है कि तथ्यात्मक साहित्य की उपेक्षित विधाओं की ओर आर्य समाजी लेखकों ने विशेष दिया। अतः यहीं से ही पत्र संग्रहों का प्रकाशन आरम्भ हुआ। डा. चन्द्रभानु सोनवणे के शब्दों में "यही संकलन जो कि गुरुकुल कांगड़ी से प्रकाशित हुआ, हिन्दी साहित्य के प्रमुख ग्रन्थों में प्रथम ग्रन्थ स्वरूप अभी भी चर्चा मिलती है..." डॉ. हरबन्स लाल शर्मा ने हिन्दी साहित्य के इतिहास में भी इस मत को स्वीकार किया है। डा. नगेन्द्र ने भी "हिन्दी साहित्य" में इसे प्रथम ग्रन्थ स्वीकार कर 1906 ईस्वी में प्रकाशित माना है।

इतना ही नहीं इसके पश्चात् पं. भगवद्दत्त जी ने ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन चार भागों में सम्पादित किये, जिसे रामलाल कपूर ट्रस्ट ने प्रकाशित किया। हिन्दी साहित्य का यह दूसरा पत्र संग्रह भी महर्षि दयानन्द सरस्वती का ही है। तत्पश्चात 1922 में स्वामी विवेकानन्द के पत्र प्रकाशित हुए।

इन सब को देखते हुए हम कह सकते हैं कि सन् 1922 ईस्वी तक निरन्तर पत्र साहित्य के क्षेत्र में आर्य समाज का एकछत्र आधिपत्य रहा तथा केवल महर्षि दयानन्द सरस्वती के पत्रों के संकलन ही उपलब्ध थे। इस पर हमें गर्व है।

104–शिप्रा अपार्टमेंट
कौशाम्बी 201010 गाजियाबाद
दूरभाष–01202773400

☞ पृष्ठ 10 का शेष

कैसे देखें अपनी 66....

वारदातों में फर्क ही नहीं समझते। देश में बहुत से ऐसे शहर हैं जिनमें कुछ हिस्से देशद्रोहियों के अड्डे बन गये हैं और वहाँ पुलिस भी जाने से डरती है। पर वोटों के लिये सरकार कदम नहीं उठाना चाहती, हाँ कोई घटना हो जाये तो थोड़े समय के लिये पोचा पोचाई कर दी जाती है। देश का एक बड़ा भाग नक्सलियों की चपेट में है उनके लिये देश या राष्ट्र का कोई अर्थ नहीं।

टुंडा जैसे लोग इतना कुछ कर पा रहे हैं तो सहायता हमारे यहाँ से ही आ रही है। कौन सहायता कर रहा है उसके लिये अकबरुद्दीन ओवैसी का भाषण– "पुलिस को हटा दें व हमें आधे घण्टे का वक्त दें" बहुत कुछ बताता है। हैदराबाद में ही अकबरुद्दीन ओवैसी के लाखों चहेते हैं। यह देन है हमारे विकृत लोकतन्त्र की।

अर्थ व्यवस्था

अर्थ व्यवस्था डांवाडोल है। Account deficit बहुत बड़ा है जिसके लिये सरकार के दो गलत निर्णय ही जिम्मेदार हैं। जिस देश में सड़कें, शिक्षा, सफाई, सेहत व अच्छी खुराक पहले होनी चाहिये थी उस देश को कारों का hub centre बना दिया। जब कारें होंगी तो Petrol व diesel भी चाहिये होगा। जो देश में पर्याप्त मात्रा में नहीं है तो बाहर से आयात करना पड़ेगा। दूसरा मुख्य कारण था– भारत जैसे देश में जहाँ लोगों को सोना इक्ठ्ठा करने की आदत हैं वहाँ, दो साल पहले, सोना आयात करने का निर्णय लेना। उन दोनों आयातों के कारण trade deficit इतना बढ़ गया है कि अब काबू से बाहर है व ऐसी डांवाडोल हालत में बाहर के लोग अपना पैसा निकाल रहे हैं जिसने अर्थव्यवस्था को और बड़ा धक्का लगाया।

इस समय आवश्यकता है– चरित्र की, मानवीय मूल्यों को जीवन में लाने की और संवेदनशील होने की; शिक्षा प्राप्त करके हम सभ्य नागरिक बनें न कि जो बनते जा रहे हैं।

–भारतेन्दु सूद, चण्डीगढ़

www.thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 09-10 /10/2013
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

डी.ए.वी. पुष्पांजलि, दिल्ली में मनाया गया विश्व शान्ति दिवस

डी.ए.वी. स्कूल पुष्पांजलि दिल्ली के प्रागंण में विश्वशान्ति दिवस का आयोजन किया गया। प्रधानाचार्या श्रीमती रश्मि राज बिस्वाल ने प्रार्थना सभा में, छात्र छात्राओं को सम्बोधित करते हुए कहा कि सम्पूर्ण विश्व में शान्ति हो, इसकी अनिवार्यता का बोध हमारे ऋषि मुनियों के चिन्तन में प्रारम्भ से ही था। उन्होंने कहा कि शान्ति मन्त्र, वह बताता है कि हमारे लिए सम्पूर्ण पृथ्वी में ही शान्ति नहीं, अपितु द्यौ, अन्तरिक्ष, पृथ्वी, जल, औषधियों, वनस्पतियों आदि तक में शान्ति हो क्योंकि हम इन सभी से प्रभावित होते हैं।

प्रधानाचार्या ने कहा कि हमारी प्रार्थना का भाव ही है कि सभी सुखी होवें, सभी निरोग होवे, सभी अच्छा देखें और कोई भी दुखी न होवे। हमें सभी के प्रति अच्छा व्यवहार करना चाहिए और मात्र व्यक्ति के प्रति ही नहीं अपितु जीव–जन्तुओं और प्रकृति आदि के साथ भी हमारा व्यवहार मानवीय हो, तभी हम सम्पूर्ण विश्व में शान्ति की स्थापना कर सकेंगे।

प्रार्थना स्थल पर छात्र–छात्राओं द्वारा विभिन्न चित्रों के द्वारा विश्व में शान्ति का आह्वान करती हुई हस्त पट्टिकर प्रदर्शित की गई।

डी.ए.वी. कुलारां (पंजाब) में आयोजित हुआ राष्ट्रीय खेल दिवस

आ सुप्रसिद्ध पदम् विभूषित महान हॉकी खिलाड़ी मेजर ध्यान चंद जी की याद में ''राष्ट्रीय खेल दिवस'' स. हीरा सिंह खुरमी डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कुलारां में बड़े ही हर्षोल्लास के साथ मनाया गया।

इस शुभ अवसर पर क्षेत्रीय निर्देशक श्री विजय कुमार जी तथा बीबी वनिंदर कौर लुम्बा (एम.एल.ए. गांव खुतराना) मुख्य अतिथि के साथ श्री कपूर चंद्र बंसल (पूर्व प्रधान नगर कौंसल, समाना) श्री हैप्पी जिंदल (सह अध्यक्ष नगर कौंसल पातड़ा) श्री निर्भर सिंह (इंटर नेश्नल कबड्डी खिलाड़ी), स. मनजीत सिंह नागरा (मैनेजर एस.बी.आई बैंक कुलारां) जैसी महान हस्तियों ने उपस्थित होकर बच्चों का उत्साह वर्धन किया।

राष्ट्रीय खेल दिवस के शुभ मौके पर बच्चों ने स्पून रेस, लम्बी कूद, सैक रेस, तीन टाँगों वाली दौड़ तथा कबड्डी खेल में भाग लिया। तथा सांस्कृतिक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किए।

मुख्य अतिथि बीबी वनिंदर कौर जी ने विजेता छात्रों को पुरस्कार व आशीर्वाद दिया। क्षेत्रीय निदेशक श्री विजय कुमार जी ने खेल प्रतियोगिताओं व खेल दिवस की हार्दिक बधाई देते हुए विश्वास दिलाया कि मेहनत के साथ मुश्किलों से निकलकर ही कुछ सीखने को मिलता है। सभी मेहमानों ने प्रधानाचार्या श्रीमती पूनम सिंह जी को खेल के प्रति रुचि जागृत करने व शिक्षा के क्षेत्र में भी अग्रणीय प्रयासों की बधाई दी। कार्यक्रम का समापन राष्ट्रीय गान के साथ किया गया। प्रधानाचार्या श्रीमती पूनम सिंह जी ने आए हुए अतिथियों का हार्दिक धन्यवाद किया।

डी.ए.वी. खेड़ा खुर्द ने मनाया हिंदी दिवस

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल खेड़ा खुर्द के प्रागंण में 13 सितंबर 2013 के दिन नर्सरी से दूसरी कक्षा के विद्यार्थियों ने हिंदी दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया। बच्चों ने हिन्दी दिवस का महत्व बताते हुए कविताएँ सुनाईं और अपने विचार व्यक्त किए। विद्यालय की शिक्षिकाओं ने कठपुतलियों के माध्यम से एक कहानी का मंचन किया। कहानी के माध्यम से बच्चों को बड़ों का आदर करना, बड़ों की आज्ञा का पालन करना जैसे जीवन मूल्यों को अपनाने के लिए प्रेरित किया गया। प्रधानाचार्या श्रीमती देविका दत्त ने बच्चों को संबोधित करते हुए हिन्दी बोलने के लिए प्रोत्साहित किया।

प्रधानाचार्य योगेश गंभीर को मिला 'हाल आफ फेम' अवार्ड

डी.आरवी डी.ए.वी. सेंटेनरी सीनियर सेकेंडरी पब्लिक स्कूल फिल्लौर के प्रधानाचार्य श्री योगेश गंभीर को 'ई पालज ग्लोबल कम्युनिटी' की ओर से अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित 'हाल आफ फेम' 'पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इस पुरस्कार के लिए रूस, अमरीका, जर्मनी, भारत, टर्की, बेलारूस, रोमानिया आदि देशों से प्रिंसिपल, अध्यापक व विद्यार्थियों के नाम अपने–अपने क्षेत्र में असाधारण कार्य के लिए नामांकित किए गए थे। अंततः कुल आठ व्यक्तियों का इस पुरस्कार से सम्मानित किया गया। भारत में दो व्यक्तियों ने यह सम्मान पाया। उन्हें यह पुरस्कार अपने स्कूल, विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के प्रति असाधारण समर्पण एवं लगन के लिए दिया। श्री गंभीर को विद्यालय के सभी स्टाफ सदस्यों एवं विद्यार्थियों ने प्रधानाचार्य महोदय को हार्दिक बधाई दी तथा भविष्य में उनके लिए नए कीर्तिमानों की मंगल कामना की।

मुद्रक व प्रकाशक – श्री प्रबोध महाजन, सभा मंत्री द्वारा मदन गोयल के प्रबंध में अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय 'आर्य जगत्' आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – श्री पूनम सूरी